ISBN: 978-93-5659-160-8

दीनदयाल शोध संस्थान का शैक्षिक योगदान

राजीव अग्रवाल

सन्तोष कुमार

ज्ञान प्रकाश

प्राक्कथन

ऋषियों-महर्षियों की परम पवित्र तपस्थली भारत भूमि पर सदैव संत महात्माओं, महायोगियों, धर्माचार्यों, महापुरुषों का अवतरण होता रहा है। यहां धर्म पर आधारित शिक्षा भारतीय जीवन का आवश्यक अंग एवं संस्कृति की आधारशिला रही है। धार्मिक शिक्षा से लोगों में अच्छे संस्कार उत्पन्न होते रहे हैं और संस्कृति हमारी चेतना को परिष्कृत करती रही है। इससे हमारे आचार-विचार व व्यवहार भी परिष्कृत होते रहे हैं।

प्राचीन धार्मिक शिक्षा में धर्माचरणों, संस्कारों, सामाजिक, सांस्कृतिक, राष्ट्रीय- चरित्र, पारस्परिक संवेदनाओं एवं स्थापित नैतिक आदर्शों के लिए भी पर्याप्त स्थान रहा है। उसके महत्व को इस रूप में माना गया है कि उसका उद्देश्य तत्कालीन समाज एवं परिस्थितियों में चरित्र-निर्माण, धार्मिक उद्देश्यों की पूर्ति, सांस्कृतिक मूल्यों का संरक्षण एवं संवर्धन व्यावहारिक व सामाजिक जीवन के उद्देश्यों की पूर्ति एवं भावी पीढ़ी के नव-निर्माण में निहित रहा है। हमारे महापुरुषों की प्रेरणा से भारतीय संस्कृति के मूल संस्कारों से सम्पन्न ब्रह्मचर्यव्रती विद्यार्थियों ने महामानव होने की प्रतिष्ठा प्राप्त की और अपने ज्ञान ज्योति से विश्व को आलोकित किया।

वास्तव में शिक्षा ज्ञान के प्रचार-प्रसार का एक माध्यम है और इसका उद्देश्य एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी तक जीवन के सभी मूल्यों को पहुंचाने तथा

भावी पीढ़ी को आने वाली चुनौतियों का सामना करने के लिए तैयार करना है।

प्रस्तुत पुस्तक का शीर्षक है ''दीनदयाल शोध संस्थान का शैक्षिक योगदान'' है। इस पुस्तक को 8 अध्यायों में विभाजित किया गया है।

प्रथम अध्याय में अध्ययन की पृष्ठभूमि, भारत में शिक्षा का विकास एवं समस्याएँ, शिक्षा के क्षेत्र में विभिन्न आयोगों के सुझाव, स्वयंसेवी संस्थाओं का योगदान, समस्या का प्रादुर्भाव, समस्या कथन, अध्ययन का औचित्य, प्रयुक्त शब्दों की व्याख्या, अध्ययन के उद्देश्य, परिसीमांकन, अध्ययन विधि, अध्ययन का महत्व एवं सार्थकता पर प्रकाश डाला गया है।

द्वितीय अध्याय में शैक्षिक योगदान से सम्बन्धित कतिपय शोध अध्ययन, अध्ययन से सम्बन्धित लेख, समाचार, पत्र-पत्रिकाएँ, पुस्तकें तथा समीक्षात्मक निष्कर्ष का उल्लेख किया गया है।

तृतीय अध्याय में दीनदयाल शोध संस्थान के संस्थापक नाना जी देशमुख के जीवन परिचय के अन्तर्गत उनके प्रारम्भिक जीवन, राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ के मुख्य कार्यकर्ता के रूप में उनकी भूमिका, राजनैतिक सफ़र, सामाजिक कार्य, एवं उनके सम्मान आदि का वर्णन किया गया है।

चतुर्थ अध्याय में दीनदयाल शोध संस्थान के परिचयात्मक विवरण के अन्तर्गत दीनदयाल शोध संस्थान की स्थापना, संकल्प, दीनदयाल शोध संस्थान का उद्देश्य, दृष्टि, गुणात्मक नीति, लक्ष्य तथा नानाजी देशमुख के शैक्षिक विचार का वर्णन किया गया है।

पंचम अध्याय में दीनदयाल शोध संस्थान के शैक्षिक प्रकल्पों के अन्तर्गत दिल्ली परियोजना, गोंडा ग्रामोदय परियोजना, बीड़ परियोजना, नागपुर परियोजना एवं चित्रकूट परियोजना का सविस्तार वर्णन किया गया है।

षष्ठ अध्याय में दीन दयाल शोध संस्थान द्वारा संचालित परमानन्द आश्रम पद्धति विद्यालय गनीवाँ, चित्रकूट का विस्तृत वर्णन किया गया है।

सप्तम अध्याय में परमानन्द आश्रम पद्धति विद्यालय की विशिष्टताओं का वर्णन किया गया है।

अष्टम अध्याय में सम्पूर्ण शोध के निष्कर्ष, शैक्षिक उपादेयता एवं सुझावो को प्रस्तुत किया गया है।

प्रस्तुत पुस्तक लघु शोध-प्रबंध पर आधारित है। शोध कार्य के प्रकाशन से वैज्ञानिक ज्ञान भण्डार में वृद्धि होती है एवं नवीन अनुसंधानों को प्रेरणा मिलती है। किसी भी शोध कार्य का तब तक कोई अर्थ नहीं है: जब तक कि वह जनसामान्य के लिये सुलभ न हो। प्रस्तुत पुस्तक इसी दिशा में किया गया एक प्रयास है। यह पुस्तक मानव समाज कल्याण के लिए सहायक सिद्ध होगी।

इस पुस्तक के सृजन में सन्दर्भ ग्रंथ सूची में उल्लिखित विभिन्न पुस्तकों का सहयोग गया है। हम सभी के प्रति कृतज्ञता प्रकट करते हैं।

प्रस्तुत पुस्तक में अनेक त्रुटियाँ होना स्वाभाविक है। अतः यदि अनुभवी विद्वतगण अवगत कराने का कष्ट करेंगे, तो हम अत्यन्त आभारी होंगे तथा भावी संस्करण में संशोधन का प्रयास करेंगे।

राजीव अग्रवाल

सन्तोष कुमार

ज्ञान प्रकाश

अनुक्रमणिका

अध्याय	विषयवस्तु	पृष्ठ संख्या
	तालिका सूची	
	चित्र सूची	
प्रथम अध्याय – अध्ययन परिचय		**1-24**

चित्र सूची

प्रथम अध्याय

अध्ययन परिचय

1.1 प्रस्तावना

पं॰ दीनदयाल उपाध्याय के अनुसार - शिक्षा का सम्बन्ध जितना व्यक्ति से है उससे अधिक समाज से, हम ऐसे मानव की कल्पना कर सकते हैं जिसे किसी भी प्रकार की शिक्षा न मिली हो, और जो अपनी सहज प्रवृत्तियों के सहारे ही जीवन यापन करता हो, किन्तु बिना शिक्षा के समाज सम्भव नहीं।

हमारे शास्त्रकारों के अनुसार यह ऋषि-ऋण है जिसे चुकाना प्रत्येक का कर्तव्य है। जब हम भावी संतति की शिक्षा की व्यवस्था करते हैं, वास्तव में हमारी उनके प्रति उपकार की भावना नहीं रहती अपितु हमें जो कुछ धरोहर पूर्वजों से प्राप्त हुई है उसे आगे की पीढ़ी को सौंपकर उनके ऋण से उऋण होने की मनीषा रहती है। पं॰ दीनदयाल उपाध्याय ने अनुभव-प्रसारण की प्रक्रिया को सही मायने में शिक्षा माना था। पं॰ दीनदयाल उपाध्याय के शब्दों में - नए घटकों को पुराने घटकों से अपने सम्बन्धों का भान रहे, तथा वे पुराने घटकों की जीवन की अनुभूति मानकर और समझकर आगे चले तो उस समूह को समाज का नाम प्राप्त हो जाता है अर्थात एक के बाद एक मानव दूसरों के जो प्रायः उसके बाद जन्में हों, विभिन्न क्षेत्रों के अपने सम्पूर्ण अनुभव को अथवा उसमें के सारभूत अंश को विभिन्न उपायों द्वारा प्रदान या संसर्गित करता है। तो इस प्रक्रिया में एक निरन्तर गतिमान मानव समूह की सृष्टि होती है जिसे समाज कहते हैं। अनुभव प्रसारण की इस प्रक्रिया को ही वास्तव में शिक्षा कहते हैं।

पं. दीनदयाल उपाध्याय ने निःशुल्क शिक्षा के सम्बन्ध में भी बड़े मार्मिक विचार प्रस्तुत किए थे। पं॰ जी के अनुसार - बच्चे को शिक्षा देना समाज के अपने हित में है। जन्म से मानव पशुवत् पैदा होता है। शिक्षा व संस्कार से वह समाज का अभिन्न घटक बनता है जो काम समाज के अपने हित में हो उसके लिए शुल्क लिया जाए, यह उल्टी बात है। कल्पना करें कि का शिक्षा शुल्क का बहिष्कार करके अथवा उसे देने में असमर्थ होने के कारण बच्चे पढ़ना बंद कर दें, क्या समाज इस स्थिति को सहन करेगा? पेड़ लगाने और सींचने के लिए पेड़ से पैसा नहीं लेते। हम तो अपनी ओर से पूंजी लगाते हैं और जानते हैं कि पेड़ के फलने पर हमें फल मिलेगें ही। शिक्षा भी इसी प्रकार का विनियोजन है। शिक्षा परिवर्तन का कारक है यह मानव समाज की दृष्टि से असम्यक परिवर्तनों, विसंगतियों तथा बुराइयों का समाधान करने का प्रबल साधन है। पर्यावरण के प्रति मानव कल्याण के आधारभूत दायित्वों के प्रति जागरूकता पैदा करने में शिक्षा की महत्वपूर्ण भूमिका है। शिक्षा एक ऐसा साधन है जो बालक का सर्वांगीण विकास कर उसे तेजस्वी, बुद्धिमान, चरित्रवान तथा वीर बनाती है। इसी प्रकार दूसरी ओर शिक्षा समाजोन्नति के लिए भी आवश्यक एवं प्रभावी उपकरण है। शिक्षा भावी पीढ़ी के बालकों में उच्च आदर्शों, आकांक्षाओं, विश्वासों तथा परम्पराओं आदि सांस्कृतिक सम्पत्ति का हस्तांतरण इस प्रकार करती है जिससे उनके हृदय में देश प्रेम व आत्म त्याग की भावना प्रज्ज्वलित हो। जब ऐसी भावनाओं तथा आदर्शों से युक्त बालक तैयार होंगे अथवा देश सेवा का व्रत धारण करने वाले मैदान में आएगें तो वर्तमान समय में चल रही अनेकानेक समस्याओं का समाधान स्वयमेव हो जाएगा वह देश निरन्तर उन्नति के शिखर पर चढ़ता रहेगा। वास्तव में शिक्षा ही मनुष्य को वास्तविक मानव की श्रेणी में स्थापित करती है। शिक्षा के बिना किसी भी सभ्य समाज की कल्पना करना भी असम्भव है। मानवीय मूल्यों, वैज्ञानिक तकनीकों, ऐतिहासिक मानवीय भूलों एवं उनमें अपेक्षित सुधार, वैचारिक सम्प्रेषण शिक्षा के अभाव में असम्भव है। शिक्षा के अभाव में मानव का तार्किक विकास सम्भव नहीं है जिसके अभाव में प्रकृति एवं ब्रह्मांड की जानकारी एवं सामंजस्य स्थापित कर पाना भी संभव नहीं है। आज तक समाज में ज्ञान की विभिन्न विरोधी विचारधाराओं द्वारा कभी भी युद्धों का सृजन नहीं हुआ है बल्कि ज्ञान के द्वारा विभिन्न विरोधी धर्म, राष्ट्रीय सीमा युद्ध का कारण बनी किन्तु विज्ञान एवं दर्शन को लेकर कभी युद्ध नहीं हुए। मुदालियर आयोग (१९५२) ने शिक्षा के कार्यों का निम्न शब्दों में स्पष्ट किया है-

"हमारी शिक्षा को ऐसी आदतों तथा दृष्टिकोणों एवं गुणों का विकास करना चाहिए जो नागरिकों को इस योग्य बना दें कि वह जनतांत्रीय नागरिकता के उत्तरदायित्वों को वहन कर विघटनकारी प्रवृत्तियों का विरोध कर सकें जो कि

व्यापक राष्ट्रीय तथा धर्मनिरपेक्ष दृष्टिकोण के विकास में बाधा डालती है।" शिक्षा में उत्पादकता बढ़ाने एवं मानव कल्याण के नए रास्ते ईजाद करने में सहायता पहुंचायी है। किसी भी देश के आर्थिक विकास का अर्थ सामान्यतः आए की उत्तरोत्तर वृद्धि से लिया जाता है आर्थिक विकास के अध्ययनों से यह निष्कर्ष निकाला जाता है कि किसी भी देश का विकास प्राकृतिक संसाधनों के साथ-साथ मानव संसाधनों पर भी निर्भर करता है बल्कि इन दोनों में मानव संसाधन पर अधिक निर्भर करता है। मानव संसाधनों का विकास शिक्षा पर ही निर्भर होता है। शिक्षा के द्वारा किसी भी राष्ट्र के नागरिकों की क्षमता योग्यता और निपुणता में जितना अधिक विकास किया जाता है उन्हें उत्पादन के प्रति जितना अधिक सचेत किया जाता है उतनी ही अधिक तेजी से देश का आर्थिक विकास होता है। अर्थवादियों के उक्त विचार (मत) की अवहेलना नहीं की जा सकती। इस प्रकार वर्तमान परिवेश में कोई समाज, राष्ट्र एवं संस्कृति शिक्षा के अभाव में अपने अस्तित्व को सजाकर रखने में सफल नहीं हो सकती। निरन्तर होने वाले अनुसंधानों से सामाजिक एवं सांस्कृतिक मूल्यों के अनुरूप आवश्यक परिवर्तन की दक्षता शिक्षा के अभाव में असम्भव है।

पाश्चात्य शिक्षा शास्त्री **एडिशन के शब्दों में-** "शिक्षा के द्वारा मानव के अन्तर में निहित उन सभी शक्तियों तथा गुणों का दिग्दर्शन होता है जिनको शिक्षा की सहायता के बिना अन्दर से बाहर निकालना नितान्त असम्भव होता है।"

प्राचीन काल से ही शिक्षा मानव जीवन के साथ समाहित होकर उसके समग्र व्यवहार को प्रभावित कर वांछित दिशा निर्देश देती आ रही है क्योंकि बालक जन्म के समय निर्बल, अबोध एवं पराश्रित होता है। परन्तु समय की गति के साथ उसे शिक्षा रूपी शक्ति प्राप्त होती है, यह शक्ति उसकी पराश्रितता को दूर करती है और एक समय ऐसा आता है जब वह मनुष्य समाज का उपयोगी सदस्य बन जाता है। उसकी इस उपयोगिता की जड़ में शिक्षा का बीज निहित होता है जिससे वह समाज के सभी क्रियाकलापों में सक्रिय रहता है। आज के जनतांत्रिक युग में शिक्षा ही विकास का साधन तथा आधार है। शिक्षा के कारण ही प्रत्येक प्राणी अपने कर्तव्यों को समझने में सक्षम होता है। मानव जीवन के अनेक क्षेत्रों से सम्बन्धित उत्तरदायित्वों को पूरा करने में शिक्षा अपना सहयोग देती है। सृष्टि के आदिकाल से ही शिक्षा के महत्व एवं उपादेयता को स्वीकार किया गया है।

भारत में प्राचीन युग की शिक्षा का परिणाम था कि व्यक्ति अपने सर्वांगीण विकास के लिए सतत् प्रयत्नशील रहते हुए जीवन काल में सामाजिक दायित्वों का निर्वहन करता था तथा धर्म एवं नैतिकता के आधार पर अपना सम्पूर्ण जीवन व्यतीत करता था। मनुष्य शिक्षा रूपी पौधे की एक खिलती कली था। इसकी (शिक्षा की) अनूठी परम्परा ने ही भारतीयों की आत्मा, शरीर, विचार तथा मस्तिष्क को स्वस्थ, शुद्ध एवं निर्मल बनाया।

प्राचीन काल में शिक्षा का अंतिम लक्ष्य मोक्ष की प्राप्ति था। इसलिए सुभाषित रत्न- भण्डार में उसी विद्या को सफल माना गया है जो मुक्ति दिला सके। **"सा विद्या या विमुक्तये"** शंकराचार्य प्राचीन काल में शिक्षा मोक्ष प्राप्ति या आत्मज्ञान का साधन थी। इस प्रकार शिक्षा जीवन के चरम उद्देश्यों की प्राप्ति के लिए माध्यम मानी जाती थी। शिक्षा जो कि राष्ट्र का हृदय है जिसका निष्पन्दन हो जाने पर राष्ट्र जीवन बिखर जाता है। शिक्षा को त्रिवेदी माना गया है जो वास्तव में मन को बल देती है और आत्मा को पवित्र बनाती है इसलिए मनुष्य जीवन में जो कुछ भी होता है या बन जाता है यह सब शिक्षा का प्रतिफल होता है। शिक्षा ही मनुष्य के अन्दर नवचेतना व व्यक्तित्व का निर्माण करती है।

मानव के सामाजिक, सांस्कृतिक, आध्यात्मिक, व्यावहारिक, वैचारिक एवं शैक्षिक पक्ष में सुधारात्मक एवं विकासात्मक परिवर्तन के लिए शिक्षा को सर्वोच्च सफलतम साधन के रूप में सदैव अंगीकार किया गया है। सामान्य बोलचाल की भाषा में पढ़ने लिखने को ही शिक्षा के रूप में लिया जाता है किन्तु शिक्षा को इस संकुचित दायरे में न रखकर उसके व्यापक रूप को स्वीकार करना उचित प्रतीत होता है। शिक्षा के अंतर्गत मानव जन्म से लेकर मृत्यु पर्यन्त सीखने वा अनुभव जन्य तथ्यों को सम्मिलित किया जाता है, इस प्रक्रिया का प्रमुख अंग है शिक्षार्थी। शिक्षार्थी वह है जो शिक्षा ग्रहण करता है। इसलिए दार्शनिकों ने बालक को शिक्षा का प्रमुख केन्द्र बिन्दु माना है। शिक्षार्थी के अभाव में शिक्षक द्वारा चाहे जितने ही सर्वोत्कृष्ट भाषण या व्याख्यान दिए जाएं तथा आदर्श प्रस्तुत किए जाएं पर शिक्षा प्रक्रिया पूर्ण नहीं होगी। वास्तव में शिक्षा मानव के अंतः में निहित सम्पूर्ण शारीरिक, मानसिक, नैतिक, बौद्धिक, सामाजिक, आध्यात्मिक और धार्मिक शक्तियों का नैसर्गिक विकास है। विश्व विख्यात दार्शनिक शैक्षिक विचारक **महात्मा गांधी के अनुसार-** "शिक्षा से मेरा अभिप्राय बालक और मनुष्य के शरीर, मन और आत्मा के सर्वांगीण एवं सर्वोत्कृष्ट विकास से है।" जन्म के बाद ही व्यक्तियों को अनेक परिस्थितियों का सामना करना पड़ता है जिससे उसे अनेक अच्छे बुरे अनुभव प्राप्त होते हैं और उसके इन्हीं अनुभवों में शिक्षा निहित होती है। बालक जन्म से ही कुछ मूल

प्रवृत्तियों को लेकर पैदा होता है, जो सभ्यता और सामाजिक दृष्टि से उत्तम नहीं होती है। शिक्षा द्वारा उनका शोधन एवं मार्गान्तीकरण होता है ताकि वह सभ्य एवं सामाजिक प्राणी बन सके।

मानव सृष्टि की सर्वोत्तम कृति है परन्तु आज की परिस्थितियों को देखकर उसके उच्च जीवन मूल्य आदर्श की बुनियाद तथा व्यक्तित्व छिन्न-भिन्न हो रहे हैं। आज का विश्व, समस्त मानवीय सभ्यता अपने आपेक्षित मूल रूप को छोड़ चुकी है। आज का मानव समाज न केवल अपने उच्च जीवन मूल्यों आदर्शों एवं व्यक्तित्व तथा आधारभूत मूल्यों को खो चुके हैं बल्कि उसे तुमने भूलने का एहसास भी नहीं है। आज का मनुष्य मदमस्त हाथी के समान अपने विभाग से कृत्यों से तथा विनाश के कगार पर आ खड़ा हुआ है। आज के समय में शिक्षा ही ऐसा साधन है जो मनुष्य को इस विघटन से बचा सकती है। शिक्षा वैश्विक स्तर पर सर्वांगीण विकास की कुंजी है। वर्तमान समय में ज्ञान के प्रसार के लिए अनेक विद्यालय, महाविद्यालय, विश्वविद्यालय स्थापित किए जा चुके हैं और भविष्य में विस्तार की योजना है, इन संस्थाओं का कार्य शिक्षा प्रदान करना इसका प्रचार-प्रसार करना है। शिक्षा का वास्तविक उद्देश्य है- प्रत्येक मनुष्य के चरित्र का निर्माण कर उसे स्वयं अपने लिए, समाज के लिए, तथा देश के लिए उपयोगी बनाना। इससे लोक में शांति, सन्तोष एवं सद्भावना का प्रसार सम्भव है।

गीता का एक श्लोक है **"कर्मन्येवाधिकारस्ते मा फलेषु कदाचन"**

अर्थात परिणाम की चिन्ता से मुक्त होकर निष्काम भाव से कर्म करना ही प्राणिमात्र का कर्तव्य है।
भारत भूमि का इतिहास ऐसे मनीषियों के उदाहरण से भरा हुआ है। जिन्होंने यश-अपयश, लाभ-हानि, लोभ-लालच से उठकर अपना सर्वस्व समाज पर न्योछावर कर दिया। ऐसी ही एक महान विभूति थे 'नानाजी देशमुख'। नानाजी देशमुख को अनेकों सामाजिक कार्यो के लिए एवं सर्वोच्च नागरिक सम्मान "भारत रत्न" से सम्मानित किया गया।

राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ की पृष्ठभूमि से आने वाले नानाजी देशमुख ने समाज के कल्याण को सर्वोपरि रखते थे। उन्होंने राजनीति से उस वक्त संन्यास ले लिया था, जब वह भारतीय राजनीति में एक जाना-पहचाना नाम हुआ करते थे। नानाजी देशमुख की जन्मभूमि भले महाराष्ट्र थी पर कर्मभूमि के लिए उत्तर प्रदेश को चुना। शहर गोरखपुर से ही भारत की शिक्षा प्रणाली में बदलाव की आधारशिला रखी। 500 से अधिक गाँवों में अनेकों सामाजिक कार्यक्रम चलाए। उन्होंने देश में बहुत सारे सामाजिक कार्य किए। उनकी परियोजना का आदर्श वाक्य था : **"हर हाथ को देंगे काम। हर खेत को देंगे पानी"**।

विद्या भारती की स्थापना नानाजी देशमुख द्वारा किया गया एक ऐसा कार्य है, जिसने भारतीय समाज को प्रत्यक्ष लाभ पहुँचाया। आजादी के बाद भी जब हम अंग्रेजों के जाने के बाद भी उनका लिखा इतिहास और सिलेबस ही भारतीय शिक्षा प्रणाली का पर्याय बन गया था।

वर्तमान की जड़ अतीत में होती है। भारत के अतीत का गौरव वर्तमान को उज्ज्वल करता हुआ उसके भविष्य को भी आकर्षक बना रहा है। प्राचीन भारत का निर्माण राजनैतिक, आर्थिक अथवा सामाजिक न होकर धर्म क्षेत्र में हुआ। भारतीय संस्कृति धर्म की भावनाओं में ओत-पोत है। हमारे पूर्वजों ने जीवन को एक व्यापक दृष्टिकोण से और सर्वभूते हितेरत: होना ही अपना कर्तव्य समझा। भारत ने केवल भारतीयों का ही विकास नहीं किया बल्कि उसने चिरमानव को जन्म दिया और मानवता का विकास करना ही उसकी सभ्यता का एक मात्र उद्देश्य हो गया।

विश्व की समस्त ज्ञान विधायों का मूलोद्रम स्रोत भारत भूमि ही है। मनुष्य की प्रतिभा सर्वप्रथम विश्व के जिन वाङमयों के रूप में पुष्पित हुई है, उनमें प्रमुख हमारे वेद हैं। वैदिक कालीन शिक्षा ही हमारी भारतीय संस्कृति की परिचायिका है। प्राचीन भारत से मनुष्य की शिक्षा का उद्देश्य था आदर्शमय जीवन बनना। आदर्श की प्राप्ति करना संसार की सभी विभूतियों से उच्चतर समझा जाता था। भारत के सम्पूर्ण साहित्य, विज्ञान और कला सृजन ही उसके उत्कृष्टता का प्रमाण है। भारतवर्ष की पुण्य भूमि युगों-युगों से महापुरुषों के आविर्भाव में कृतार्थ होती रही है, आज भी हो रही है।

1.1.1 शिक्षा: विकास की प्रक्रिया-

मनुष्य की शिक्षा उसे केवल परिस्थितियों के साथ सामन्जस्य करना ही नही सिखाती है वरन् उसे सामाजिक परिवर्तन करने और परिवर्तनों को स्वीकारने के लिये तैयार करती है। इस प्रकार शिक्षा के उद्देश्य पाठ्यचर्चा और शिक्षण विधियों आदि में आवश्यकतानुसार परिवर्तन होता रहता है। डा0 सर्वपल्ली राधाकृष्णन ने स्पष्ट कहा है कि- ''शिक्षा को मनुष्य और समाज दोनों का निर्माण करना चाहिये।''

शिक्षा मानव को एक अच्छा इंसान बनाती है। शिक्षा में ज्ञान, उचित आचरण और तकनीकी दक्षता, शिक्षण और विद्या प्राप्ति आदि समाविष्ट हैं। इस प्रकार यह कौशलों, व्यापारों या व्यवसायों एवं मानसिक, नैतिक और सौंदर्य विषयक के उत्कर्ष पर केन्द्रित है।

शिक्षा, समाज एक पीढ़ी द्वारा अपने से निचली पीढ़ी को अपने ज्ञान के हस्तांतरण का प्रयास है। इस विचार से शिक्षा एक संस्था के रूप में काम करती है, जो व्यक्ति विशेष को समाज से जोड़ने में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाती है तथा समाज की संस्कृति की निरंतरता को बनाए रखती है। बच्चा शिक्षा द्वारा समाज के आधारभूत नियमों, व्यवस्थाओं, समाज के प्रतिमानों एवं मूल्यों को सीखता है। बच्चा समाज से तभी जुड़ पाता है जब वह उस समाज विशेष के इतिहास से अभिमुख होता है। शिक्षा व्यक्ति की अंतर्निहित क्षमता तथा उसके व्यक्तित्त्व का विकसित करने वाली प्रक्रिया है। यही प्रक्रिया उसे समाज में एक वयस्क की भूमिका निभाने के लिए समाजीकृत करती है तथा समाज के सदस्य एवं एक जिम्मेदार नागरिक बनने के लिए व्यक्ति को आवश्यक ज्ञान तथा कौशल उपलब्ध कराती है। शिक्षा शब्द संस्कृत भाषा की 'शिक्ष्' धातु में 'अ' प्रत्यय लगाने से बना है। 'शिक्ष्' का अर्थ है सीखना और सिखाना। 'शिक्षा' शब्द का अर्थ हुआ सीखने-सिखाने की क्रिया।

जब हम शिक्षा शब्द के प्रयोग को देखते हैं तो मोटे तौर पर यह दो रूपों में प्रयोग में लाया जाता है, व्यापक रूप में तथा संकुचित रूप में। **व्यापक अर्थ में शिक्षा** किसी समाज में सदैव चलने वाली सोद्देश्य सामाजिक प्रक्रिया है जिसके द्वारा मनुष्य की जन्मजात शक्तियों का विकास, उसके ज्ञान एवं कौशल में वृद्धि एवं व्यवहार में परिवर्तन किया जाता है और इस प्रकार उसे सभ्य, सुसंस्कृत एवं योग्य नागरिक बनाया जाता है। मनुष्य क्षण-प्रतिक्षण नए-नए अनुभव प्राप्त करता है व करवाता है, जिससे उसका दिन-प्रतिदन का व्यवहार प्रभावित होता है। उसका यह सीखना-सिखाना विभिन्न समूहों, उत्सवों, पत्र-पत्रिकाओं, रेडियो, टेलीविजन आदि से अनौपचारिक रूप से होता है। यही सीखना-सिखाना शिक्षा के व्यापक तथा विस्तृत रूप में आते हैं। **संकुचित अर्थ में शिक्षा** किसी समाज में एक निश्चित समय तथा निश्चित स्थानों (विद्यालय, महाविद्यालय) में सुनियोजित ढंग से चलने वाली एक सोद्देश्य सामाजिक प्रक्रिया है जिसके द्वारा विद्यार्थी निश्चित पाठ्यक्रम को पढ़कर संबंधित परीक्षाओं को उत्तीर्ण करना सीखता है।

1.1.2 भारत में शिक्षा का विकास-

भारत में शिक्षा के प्रति रुझान प्राचीन काल से ही देखने को मिलता है। प्राचीन काल में गुरुकुलों, आश्रमों तथा बौद्ध मठों में शिक्षा ग्रहण करने की व्यवस्था होती थी। तत्कालीन शिक्षा केन्द्रों में नालन्दा, तक्षशिला एवं वल्लभी की गणना की जाती है। मध्यकालीन भारत में शिक्षा मदरसों में प्रदान की जाती थी। मुग़ल शासकों ने दिल्ली, अजमेर, लखनऊ एवं आगरा में मदरसों का निर्माण करवाया। भारत में आधुनिक व पाश्चात्य शिक्षा की शुरुआत ब्रिटिश ईस्ट इंडिया कम्पनी के शासन काल से हुई।

भारतीय शिक्षा का इतिहास भारतीय सभ्यता का भी इतिहास है। भारतीय समाज के विकास और उसमें होने वाले परिवर्तनों की रूपरेखा में शिक्षा की जगह और उसकी भूमिका को भी निरंतर विकासशील पाते हैं। सूत्रकाल तथा लोकायत के बीच शिक्षा की सार्वजनिक प्रणाली के पश्चात हम बौद्धकालीन शिक्षा को निरंतर भौतिक तथा सामाजिक प्रतिबद्धता से परिपूर्ण होते देखते हैं। बौद्धकाल में स्त्रियों और शूद्रों को भी शिक्षा की मुख्य धारा में सम्मिलित किया गया।

प्राचीन भारत में जिस शिक्षा व्यवस्था का निर्माण किया गया था वह समकालीन विश्व की शिक्षा व्यवस्था से समुन्नत व उत्कृष्ट थी लेकिन कालान्तर में भारतीय शिक्षा का व्यवस्था ह्रास हुआ। विदेशियों ने यहाँ की शिक्षा व्यवस्था को उस अनुपात में विकसित नहीं किया, जिस अनुपात में होना चाहिये था। अपने संक्रमण काल में भारतीय शिक्षा को

कई चुनौतियों व समस्याओं का सामना करना पड़ा। आज भी ये चुनौतियाँ व समस्याएं हमारे सामने हैं जिनसे दो-दो हाथ करना है। १८५० तक भारत में गुरुकुल की प्रथा चलती आ रही थी परन्तु मकोले द्वारा अंग्रेजी शिक्षा के संक्रमण के कारण भारत की प्राचीन शिक्षा व्यवस्था का अन्त हुआ और भारत में कई गुरुकुल बंद हुए और उनके स्थान पर कान्वेंट और पब्लिक स्कूल खोले गए।

1.1.2.1 प्राचीन काल में शिक्षा का विकास-

भारत की प्राचीन शिक्षा पद्धति में हमें अनौपचारिक तथा औपचारिक दोनों प्रकार के शैक्षणिक केन्द्रों का उल्लेख प्राप्त होता है। औपचारिक शिक्षा मन्दिर, आश्रमों और गुरुकुलों के माध्यम से दी जाती थी। ये ही उच्च शिक्षा के केन्द्र भी थे। जबकि परिवार, पुरोहित, पण्डित, सन्यासी और त्यौहार प्रसंग आदि के माध्यम से अनौपचारिक शिक्षा प्राप्त होती थी। विभिन्न धर्मसूत्रों में इस बात का उल्लेख है कि माता ही बच्चे की श्रेष्ठ गुरु है। कुछ विद्वानों ने पिता को बच्चे के शिक्षक के रुप में स्वीकार किया है। जैसे-जैसे सामाजिक विकास हुआ वैसे-वैसे शैक्षणिक संस्थाएं स्थापित होने लगी। वैदिक काल में परिषद, शाखा और चरण जैसे संघों का स्थापन हो गया था, लेकिन व्यवस्थित शिक्षण संस्थाएं सार्वजनिक स्तर पर बौद्धों द्वारा प्रारम्भ की गई थी।

गुरुकुलों की स्थापना प्रायः वनों, उपवनों तथा ग्रामों या नगरों में की जाती थी। वनों में गुरुकुल बहुत कम होते थे। अधिकतर दार्शनिक आचार्य निर्जन वनों में निवास, अध्ययन तथा चिन्तन पसन्द करते थे। वाल्मीकि, सन्दीपनि, कण्व आदि ऋषियों के आश्रम वनों में ही स्थित थे और इनके यहाँ दर्शन शास्त्रों के साथ-साथ व्याकरण, ज्योतिष तथा नागरिक शास्त्र भी पढ़ाये जाते थे। अधिकांश गुरुकुल गांवों या नगरों के समीप किसी वाग अथवा वाटिला में बनाये जाते थे। जिससे उन्हें एकान्त एवं पवित्र वातावरण प्राप्त हो सके। इससे दो लाभ थे; एक तो गृहस्थ आचार्यों को सामग्री एकत्रित करने में सुविधा थी, दूसरे ब्रह्मचारियों को भिक्षाटन में अधिक भटकना नहीं पड़ता था। मनु केअनुसार- `ब्रह्मचारों को गुरु के कुल में, अपनी जाति वालों में तथा कुल बान्धवों के यहां से भिक्षा याचना नहीं करनी चाहिए, यदि भिक्षा योग्य दूसरा घर नहीं मिले, तो पूर्व-पूर्व गृहों का त्याग करके भिक्षा याचना करनी चाहिये। इससे स्पष्ट होता है कि गुरुकुल गांवों के सन्निकट ही होते थे। स्वजातियों से भिक्षा याचना करने में उनके पक्षपात तथा ब्रह्मचारी के गृह की ओर आकर्षण का भय भी रहता था अतएव स्वजातियों से भिक्षा-याचना का पूर्ण निषेध कर दिया गया था। बहुधा राजा तथा सामन्तों का प्रोत्साहन पाकर विद्वान् पण्डित उनकी सभाओं की ओर आकर्षित होते थे और अधिकतर उनकी राजधानी में ही बस जाते थे, जिससे वे नगर शिक्षा के केन्द्र बन जाते थे। इनमें तक्षशिला, पाटलिपुत्र, कान्यकुब्ज, मिथिला, धारा, तंजोर आदि प्रसिद्ध हैं। इसी प्रकार तीर्थ स्थानों की ओर भी विद्वान आकृष्ट होते थे। फलत: काशी, कर्नाटक, नासिक आदि शिक्षा के प्रसिद्ध केन्द्र बन गये। कभी-कभी राजा भी अनेक विद्वानों को आमंत्रित करके दान में भूमि आदि देकर तथा जीविका निश्चित करके उन्हें बसा लेते थे। उनके बसने से वहां एक नया गांव बन जाता था। इन गांवों को `अग्रहार' कहते थे। इसके अतिरिक्त विभिन्न हिन्दू सम्प्रदायों एवं मठों के आचार्यों के प्रभाव से ईसा की दूसरी शताब्दी के लगभग मठ शिक्षा के महत्त्वपूर्ण केन्द्र बन गये। इनमें शंकराचार्य, रामानुजाचार्य, मध्वाचार्य आदि के मठ प्रसिद्ध हैं।

सार्वजनिक शिक्षण संस्थाएँ सर्वप्रथम बौद्ध विहारों में स्थापित हुई थीं। भगवान बुद्ध ने उपासकों की शिक्षा-दीक्षा पर अत्यधिक बल दिया। इस संस्थाओं में धार्मिक ग्रन्थों का अध्यापन एवं आध्यात्मिक अभ्यास कराया जाता था। अशोक (३०० ई. पू.) ने बौद्ध विहारों की विशेष उन्नति करायी। कुछ समय पश्चात् ये विद्या के महान केन्द्र बन गये। ये वस्तुत: गुरुकुलों के ही समान थे। किन्तु इनमें गुरु किसी एक कुल का प्रतिनिधि न होकर सारे विहार का ही प्रधान होता था। ये धर्म प्रचार की दृष्टि से जनसाधारण के लिए भी सुलभ थे। इनमें नालन्दा विश्वविद्यालय (४५० ई.), वल्लभी (७०० ई.), विक्रमशिला (८०० ई.) प्रमुख शिक्षण संस्थाएँ थीं। इन संस्थाओं का अनुसरण करके हिन्दुओं ने भी मन्दिरों में विद्यालय खोले जो आगे चल कर मठों के रूप में परिवर्तित हो गये।

1.1.2.1.1 नारियों के लिये पाठशालाएं

वेदों में उल्लिखित कुछ मन्त्र इस बात को रेखांकित करते है कि कुमारियों के लिए शिक्षा अपरिहार्य एवं महत्वपूर्ण मानी जाती थी। स्त्रियों को लौकिक एवं आध्यात्मिक दोनों प्रकार की शिक्षाएँ दी जाती थी। सहशिक्षा को बुरा

नहीं समझा जाता था। गोभिल गृहसूत्र में कहा गया है कि अशिक्षित पत्नी यज्ञ करने में समर्थ नहीं होती थी। संगीत शिक्षा पर जोर दिया जाता था। इच्छा और योग्यता के अनुसार शिक्षा प्राप्ति के लिए श्रमणक्रमणिका में उल्लिखित प्राचीन परम्परा के अनुसार ऋग्वेद की रचना में २०० स्त्रियों का योगदान है। शकुन्तला राव शास्त्री ने इसे तीन कोटि में विभाजित किया है। (१) महिला ऋषि द्वारा लिखे गये श्लोक, (२) आंशिक रूप से महिला ऋषि द्वारा लिखे गये श्लोक एवं (३) महिला ऋषिकाओं को समर्पित श्लोक। ऋग्वेद के दशम मंडल के ३९ एवं ४० सूक्त की ऋषिका घोषा, रोमशा, विश्ववारा, इन्द्राणी, शची और अपाला थी।

वैदिक युग में स्त्रियाँ यज्ञोपवीत घारण कर वेदाध्ययन एवं सायं- प्रात होम आदि कर्म करती थी। शतपथ ब्राह्मण में व्रतोपनयन का उल्लेख है। हरित संहिता के अनुसार वैदिक काल में शिक्षा ग्रहण करने वाली दो प्रकार की कन्याएँ होती थी - ब्रह्मवादिनी एवं सद्योवात्। सद्योवात् 15 या 16 वर्ष की उम्र तक, जब तक उनका विवाह नहीं हो जाता था, तब तक अध्ययन करती थी। इन्हें प्रार्थना एवं यज्ञों के लिए आवश्यक महत्वपूर्ण वैदिक मंत्र पढ़ाये जाते थे तथा संगीत एवं नृत्य की भी शिक्षा दी जाती थी।

महावीर और गौतम बुद्ध ने संघ मे नारियों के प्रवेश की अनुमति दी थी, ये धर्म और दर्शन के मनन के लिए ब्रह्मचर्य व्रत का पालन करती थीं। जैन और बौद्ध सहित्य से पता चलता है कि कुछ भिक्षुणियों ने साहित्य के विकास और शिक्षा में अपूर्व योगदान दिया जिसमें अशोक की पुत्री संघमित्रा प्रमुख थी। यहाँ बौद्ध आगमों की महान शिक्षिकाओं के रूप में उनकी बड़ी ख्याति थी। जैन साहित्य से जयंती नामक महिला का पता चलता है जो धर्म और दर्शन के ज्ञान की प्यास में अविवाहित रही और अंत में भिक्षुणी हो गई।

हाल की गाथासप्तशती में सात कवयित्रियों की रचनाएँ संग्रहीत है। शीलभट्टारिका अपनी सरल तथा प्रासादयुक्त शैली तथा शब्द और अर्थ के सामंजस्य के लिए प्रसिद्ध थी। देवी लाट प्रदेश की कवियित्री थी। विदर्भ में विजयांका की कीर्ति की समता केवल कालिदास ही कर सकते थे। अवंतीसुन्दरी कवियत्री और टीकाकार देनों ही थी। कतिपय महिलाओं ने आयुर्वेद पर पांडित्यपूर्ण और प्रामाणिक रचनायें की हैं जिनमें रुसा का नाम बड़ा प्रसिद्ध है।

आलोच्य काल में नारियों के लिए किसी प्रकार की पाठशाला का पृथक्-प्रबन्ध किया गया हो ऐसा वर्णन प्राप्त नहीं होता। बौद्धों ने अपने विहारों में भिक्षुणियों की शिक्षा की व्यवस्था की थी किन्तु कालान्तर में उसके भी उदाहरण प्राप्त नहीं होते। वस्तुत: कन्याओं के लिए पृथक् पाठशालाएँ न थीं। जिन कन्याओं को गुरुकुल में अध्ययन करने का अवसर प्राप्त होता था वे पुरुषों के साथ ही अध्ययन करती थीं। उत्तररामचरित में वाल्मीकि के आश्रम में आत्रेयी अध्ययन कर रही थी। भवभूति ने `मालती माधव' (प्रथमांक) में कामन्दकी के गुरुकुल में अध्ययन करने का वर्णन किया है। किन्तु ये उदाहरण बहुत कम हैं। अधिकतर गुरुपत्नी, गुरुकन्या अथवा गुरु की पुत्रवधू ही गुरुकुल में रहने के कारण अध्ययन का लाभ उठा पाती थीं वस्तुत: शास्त्रों के अनुरोध पर कन्याओं की शिक्षा गृह पर ही होती थी।

1.1.2.1.2 छात्रावासों का प्रबन्ध

प्राचीन भारत में गुरु के प्रत्यक्ष निरीक्षण में रहकर विद्योपार्जन श्रेष्ठ माना जाता था। अतएव अधिकांश विद्यार्थी गुरु कुलों में ही रहते थे। गुरु जन अपने घर पर ही विद्यार्थी के आवास-निवास की व्यवस्था करते थे। भोजन का कार्य भिक्षा वृत्ति द्वारा चलता था अथवा अध्यापक के गृह में भी व्यवस्था हो जाती थीं। उस समय एक गुरु के पास एक साथ प्राय: पन्द्रह से अधिक विद्यार्थी नहीं पढ़ते थे। कभी-कभी तो केवल चार विद्यार्थी ही एक गुरु के अधीन अध्ययन करते थे। अतएव उनके भोजन व निवास की व्यवस्था करना गुरु के लिए कोई कठिन कार्य नहीं होता था। किन्तु गुरु के विद्यार्थियों का प्रबन्ध करने में असमर्थ होने पर विद्यार्थी अपने रहने का प्रबन्ध स्वयं करते थे।

अध्यापन कार्य में विद्यार्थी से धन मांगना अध्यापक के लिए अत्यन्त निन्दनीय माना जाता था। गुरु निर्धन से निर्धन विद्यार्थी को भी पढ़ाने से मना नहीं कर सकता था। जो गुरु विद्या के लिए मोल-भाव करता था उसको विद्या का व्यवसायी कह कर हेय समझा जाता था। ऐसे अध्यापकों को धार्मिक अवसरों पर ऋत्विक के कार्य के अयोग्य कहा गया। किन्तु गुरु के पढ़ाये हुए एक ही अक्षर द्वारा शिष्य उसका ऋणी समझा जाता था। अतएव समावर्तन के अवसर पर शिष्य गुरु-दक्षिणा के रूप में सामर्थ्यानुसार गुरु को धन देते थे। जो अत्यन्त निर्धन होते थे वे गुरु की गृहस्थी में सेवा-कार्य

करके तथा समावर्तन के समय भिक्षा मांग कर गुरु दक्षिणा देते थे। वस्तुत: राजा और प्रजा दोनों का कर्त्तव्य था कि वे विद्वान आचार्यों एवं शिक्षण संस्थाओं को मुक्त हस्त दान दें।

1.1.2.2 मध्यकाल में शिक्षा का विकास-

भारत में मुस्लिम राज्य की स्थापना होते ही इस्लामी शिक्षा का प्रसार होने लगा। फारसी जाननेवाले ही सरकारी कार्य के योग्य समझे जाने लगे। हिंदू अरबी और फारसी पढ़ने लगे। बादशाहों और अन्य शासकों की व्यक्तिगत रुचि के अनुसार इस्लामी आधार पर शिक्षा दी जाने लगी। इस्लाम के संरक्षण और प्रचार के लिए मस्जिदें बनती गई, साथ ही मकतबों, मदरसों और पुस्तकालयों की स्थापना होने लगी। मकतब प्रारंभिक शिक्षा के केंद्र होते थे और मदरसे उच्च शिक्षा के। मकतबों की शिक्षा धार्मिक होती थी। विद्यार्थी कुरान के कुछ अंशों का कंठस्थ करते थे। वे पढ़ना, लिखना, गणित, अर्जीनवीसी और चिट्ठीपत्री भी सीखते थे। इनमें हिंदू बालक भी पढ़ते थे।

मकतबों में शिक्षा प्राप्त कर विद्यार्थी मदरसों में प्रविष्ट होते थे। यहाँ प्रधानता धार्मिक शिक्षा दी जाती थी। साथ साथ इतिहास, साहित्य, व्याकरण, तर्कशास्त्र, गणित, कानून इत्यादि की पढ़ाई होती थी। सरकार शिक्षकों को नियुक्त करती थी। कहीं कहीं प्रभावशाली व्यक्तियों के द्वारा भी उनकी नियुक्ति होती थी। अध्यापन फारसी के माध्यम से होता था। अरबी मुसलमानों के लिए अनिवार्य पाठ्य विषय था। छात्रावास का प्रबंध किसी किसी मदरसे में होता था। दरिद्र विद्यार्थियों को छात्रवृत्ति मिलती थी। अनाथालयों का संचालन होता था। शिक्षा नि:शुल्क थी। हस्तलिखित पुस्तकें पढ़ी और पढ़ाई जाती थीं।राजकुमारों के लिए महलों के भीतर शिक्षा का प्रबंध था। राज्यव्यवस्था, सैनिक संगठन, युद्धसंचालन, साहित्य, इतिहास, व्याकरण, कानून आदि का ज्ञान गृहशिक्षक से प्राप्त होता था। राजकुमारियाँ भी शिक्षा पाती थीं। शिक्षकों का बड़ा सम्मान था। वे विद्वान् और सच्चरित्र होते थे। छात्र और शिक्षकों को आपसी संबंध प्रेम और सम्मान का था। सादगी, सदाचार, विद्याप्रेम और धर्माचरण पर जोर दिया जाता था। कंठस्थ करने की परंपरा थी। प्रश्नोत्तर, व्याख्या और उदाहरणों द्वारा पाठ पढ़ाए जाते थे। कोई परीक्षा नहीं थी। अध्ययन अध्यापन में प्राप्त अवसरों में शिक्षक छात्रों की योग्यता और विद्वत्ता के विषय में तथ्य प्राप्त करते थे। दंड प्रयोग किया जाता था। जीविका उपार्जन के लिए भी शिक्षा दी जाती थी। दिल्ली, आगरा, बीदर, जौनपुर, मालवा मुस्लिम शिक्षा के केंद्र थे। मुसलमान शासकों के संरक्षण के अभाव में भी संस्कृत काव्य, नाटक, व्याकरण, दर्शन ग्रंथों की रचना और उनका पठन पाठन बराबर होता रहा।

1.1.2.3 आधुनिक काल में शिक्षा का विकास-

भारत में आधुनिक शिक्षा की नींव यूरोपीय ईसाई धर्मप्रचारक तथा व्यापारियों के हाथों से डाली गई। उन्होंने कई विद्यालय स्थापित किए। प्रारंभ में मद्रास ही उनका कार्यक्षेत्र रहा। धीरे धीरे कार्यक्षेत्र का विस्तार बंगाल में भी होने लगा। इन विद्यालयों में ईसाई धर्म की शिक्षा के साथ साथ इतिहास, भूगोल, व्याकरण, गणित, साहित्य आदि विषय भी पढ़ाए जाते थे। रविवार को विद्यालय बंद रहता था। अनेक शिक्षक छात्रों की पढ़ाई अनेक श्रेणियों में कराते थे। अध्यापन का समय नियत था। साल भर में छोटी बड़ी अनेक छुट्टियाँ हुआ करती थीं।

प्राय: 150 वर्षों के बीतते बीतते व्यापारी ईस्ट इंडिया कम्पनी राज्य करने लगी। विस्तार में बाधा पड़ने के डर से कंपनी शिक्षा के विषय में उदासीन रही। फिर भी विशेष कारण और उद्देश्य से 1781 में कलकत्ते में 'कलकत्ता मदरसा' कम्पनी द्वारा और 1792 में बनारस में 'संस्कृत कालेज' जोनाथन डंकन द्वारा स्थापित किए गए। धर्मप्रचार के विषय में भी कंपनी की पूर्वनीति बदलने लगी। कंपनी अब अपने राज्य के भारतीयों को शिक्षा देने की आवश्यकता को समझने लगी। 1813 के आज्ञापत्र के अनुसार शिक्षा में धन व्यय करने का निश्चय किया गया। किस प्रकार की शिक्षा दी जाए, इसपर प्राच्य और पाश्चात्य शिक्षा के समर्थकों में मतभेद रहा। वाद विवाद चलता चला। अंत में लार्ड मेकाले के तर्क वितर्क और राजा राममोहन राय के समर्थन से प्रभावित हो 1835 ई. में लार्ड बेंटिक ने निश्चय किया कि अंग्रेजी भाषा और साहित्य और यूरोपीय इतिहास, विज्ञान, इत्यादि की पढ़ाई हो और इसी में 1813 के आज्ञापत्र में अनुमोदित धन का व्यय हो। प्राच्य शिक्षा चलती चले, परन्तु अंग्रेजी और पश्चिमी विषयों के अध्ययन और अध्यापन पर जोर दिया जाए।

पाश्चात्य रीति से शिक्षित भारतीयों की आर्थिक स्थिति सुधरते देख जनता इधर झुकने लगी। अंग्रेजी विद्यालयों में अधिक संख्या में विद्यार्थी प्रविष्ट होने लगे क्योंकि अंग्रेजी पढ़े भारतीयों को सरकारी पदों पर नियुक्त करने की नीति की

सरकारी घोषणा हो गई थी। सरकारी प्रोत्साहन के साथ साथ अंग्रेजी शिक्षा को पर्याप्त मात्रा में व्यक्तिगत सहयोग भी मिलता गया। अंग्रेजी साम्राज्य के विस्तार के साथ साथ अधिक कर्मचारियों की और चिकित्सकों, इंजिनियरों और कानून जाननेवालों की आवश्यकता पड़ने लगी। उपयोगी शिक्षा की ओर सरकार की दृष्टि गई। मेडिकल, इजिनियरिंग और लॉ कालेजों की स्थापना होने लगी। स्त्रियों की दशा सुधारने और उनकी शिक्षा के लिए ज्योतिबा फुले ने 1848 में एक स्कूल खोला। यह इस काम के लिए देश में पहला विद्यालय था। लड़कियों को पढ़ाने के लिए अध्यापिका नहीं मिली तो उन्होंने कुछ दिन स्वयं यह काम करके अपनी पत्नी सावित्री को इस योग्य बना दिया। उच्च वर्ग के लोगों ने आरंभ से ही उनके काम में बाधा डालने की चेष्टा की, किंतु जब फुले आगे बढ़ते ही गए तो उनके पिता पर दबाब डालकर पति-पत्नी को घर से निकालवा दिया इससे कुछ समय के लिए उनका काम रुका अवश्य, पर शीघ्र ही उन्होंने एक के बाद एक बालिकाओं के तीन स्कूल खोल दिए। स्त्री शिक्षा पर ध्यान दिया जाने लगा।

1853 में शिक्षा की प्रगति की जाँच के लिए एक समिति बनी। 1854 में वुड के शिक्षासंदेश पत्र में समिति के निर्णय कंपनी के पास भेज दिए गए। संस्कृत, अरबी और फारसी का ज्ञान आवश्यक समझा गया। औद्योगिक विद्यालयों और विश्वविद्यालयों की स्थापना का प्रस्ताव रखा गया। प्रातों में शिक्षा विभाग अध्यापक प्रशिक्षण नारीशिक्षा इत्यादि की सिफारिश की गई। 1857 में स्वतंत्रता युद्ध छिड़ गया जिससे शिक्षा की प्रगति में बाधा पड़ी। प्राथमिक शिक्षा उपेक्षित ही रही। उच्च शिक्षा की उन्नति होती गई। 1857 में कलकत्ता, बंबई और मद्रास में विश्वविद्यालय स्थापित हुए।

मुख्यत: प्राथमिक शिक्षा की दशा की जाँच करते हुए शिक्षा के प्रश्नों पर विचार करने के लिए 1882 में सर विलियम विल्सन हंटर की अध्यक्षता में भारतीय शिक्षा आयोग की नियुक्ति हुई। आयोग ने प्राथमिक शिक्षा के लिए उचित सुझाव दिए। सरकारी प्रयत्न को माध्यमिक शिक्षा से हटाकर प्राथमिक शिक्षा के संगठन में लगाने की सिफारिश की। सरकारी माध्यमिक स्कूल प्रत्येक जिले में एक से अधिक न हो; शिक्षा का माध्यम माध्यमिक स्तर में अंग्रेजी रहे। माध्यमिक स्कूलों के सुधार और व्यावसायिक शिक्षा के प्रसार के लिए आयोग ने सिफारिशें कीं। सहायता अनुदान प्रथा और सरकारी शिक्षा विभागों का सुधार, धार्मिक शिक्षा, स्त्री शिक्षा, मुसलमानों की शिक्षा इत्यादि पर भी आयोग ने प्रकाश डाला।

आयोग की सिफारिशों से भारतीय शिक्षा में उन्नति हुई। विद्यालयों की संख्या बढ़ी। नगरों में नगरपालिका और गाँवों में जिला परिषद् का निर्माण हुआ और शिक्षा आयोग ने प्राथमिक शिक्षा को इनपर छोड़ दिया परंतु इससे विशेष लाभ न हो पाया। प्राथमिक शिक्षा की दशा सुधर न पाई। सरकारी शिक्षा विभाग माध्यमिक शिक्षा की सहायता करता रहा। शिक्षा का माध्यम अंग्रेजी ही रही। मातृभाषा की उपेक्षा होती गई। शिक्षा संस्थाओं और शिक्षितों की संख्या बढ़ी, परंतु शिक्षा का स्तर गिरता गया। देश की उन्नति चाहनेवाले भारतीयों में व्यापक और स्वतंत्र राष्ट्रीय शिक्षा की आवश्यकता का बोध होने लगा। स्वतंत्रता प्रेमी भारतीयों और भारत प्रेमियों ने सुधार का काम उठा लिया। 1870 में बाल गंगाधर तिलक और उनके सहयोगियों द्वारा पूना में फर्ग्यूसन कॉलेज, 1886 में आर्यसमाज द्वारा लाहौर में दयानंद ऐंग्लो वैदिक कालेज और 1898 में काशी में श्रीमती एनी बेसेंट द्वारा सेंट्रल हिंदू कालेज स्थापित किए गए। 1894 में कोल्हापुर रियासत के राजा छत्रपति साहूजी महाराज ने दलित और पिछड़ी जाति के लोगों के लिए विद्यालय खोले और छात्रावास बनवाए। इससे उनमें शिक्षा का प्रचार हुआ और सामाजिक स्थिति बदलने लगी। 1894 से 1922 तक पिछड़ी जातियों समेत समाज के सभी वर्गों के लिए अलग-अलग सरकारी संस्थाएं खोलने की पहल की। यह अनूठी पहल थी उन जातियों को शिक्षित करने के लिए, जो सदियों से उपेक्षित थीं, इस पहल में दलित-पिछड़ी जातियों के बच्चों की शिक्षा के लिए ख़ास प्रयास किये गए थे। वंचित और गरीब घरों के बच्चों को उच्च शिक्षा के लिए उन्होंने आर्थिक सहायता उपलब्ध कराई। 1920 को नासिक में छात्रावास की नींव रखी। साहू महाराज के प्रयासों का परिणाम उनके शासन में ही दिखने लग गया था। साहू जी महाराज ने जब देखा कि अछूत-पिछड़ी जाति के छात्रों की राज्य के स्कूल-कॉलेजों में पर्याप्त संख्या हैं, तब उन्होंने वंचितों के लिए खुलवाये गए पृथक स्कूल और छात्रावासों को बंद करवा दिया और उन्हें सामान्य छात्रों के साथ ही पढ़ने की सुविधा प्रदान की। डा० भीमराव अम्बेडकर बड़ौदा नरेश की छात्रवृति पर पढ़ने के लिए विदेश गए लेकिन छात्रवृत्ति बीच में ही रोक दिए जाने के कारण उन्हे वापस भारत आना पड़ा। इसकी जानकारी जब साहू जी महाराज को हुई तो महाराज ने आगे की पढ़ाई जारी रखने के लिए उन्हें सहयोग दिया।

1901 में लार्ड कर्ज़न ने शिमला में एक गुप्त शिक्षा सम्मेलन किया था जिसें 152 प्रस्ताव स्वीकृत हुए थे। इसमें कोई भारतीय नहीं बुलाया गया था और न सम्मेलन के निर्णयों का प्रकाशन ही हुआ। इसको भारतीयों ने अपने विरुद्ध रचा हुआ षड्यंत्र समझा। कर्ज़न को भारतीयों का सहयोग न मिल सका। प्राथमिक शिक्षा की उन्नति के लिए कर्ज़न ने उचित रकम की स्वीकृति दी, शिक्षकों के प्रशिक्षण की व्यवस्था की तथा शिक्षा अनुदान पद्धति और पाठ्यक्रम में सुधार किया। कर्ज़न का मत था कि प्राथमिक शिक्षा मातृभाषा के माध्यम से ही दी जानी चाहिए। माध्यमिक स्कूलों पर सरकारी शिक्षाविभाग और विश्वविद्यालय दोनों का नियंत्रण आवश्यक मान लिया गया। आर्थिक सहायता बढ़ा दी गई। पाठ्यक्रम में सुधार किया गया। कर्जन माध्यमिक शिक्षा के क्षेत्र में सरकार का हटना उचित नहीं समझता था, प्रत्युत सरकारी प्रभाव का बढ़ाना आवश्यक मानता था। इसलिए वह सरकारी स्कूलों की संख्या बढ़ाना चाहता था। लार्ड कर्जन ने विश्वविद्यालय और उच्च शिक्षा की उन्नति के लिए 1902 में भारतीय विश्वविद्यालय आयोग नियुक्त किया। पाठ्यक्रम, परीक्षा, शिक्षण, कालेजों की शिक्षा, विश्वविद्यालयों का पुनर्गठन इत्यादि विषयों पर विचार करते हुए आयोग ने सुझाव उपस्थित किए। इस आयोग में भी कोई भारतीय न था। इसपर भारतीयों में क्षोभ बढ़ा। उन्होंने विरोध किया। 1904 में भारतीय विश्वविद्यालय कानून बना। पुरातत्व विभाग की स्थापना से प्राचीन भारत के इतिहास की सामग्रियों का संरक्षण होने लगा। 1905 के स्वदेशी आंदोलन के समय कलकत्ते में जातीय शिक्षा परिषद् की स्थापना हुई और नैशनल कालेज स्थापित हुआ जिसके प्रथम प्राचार्य अरविंद घोष थे। बंगाल टेकनिकल इन्स्टिट्यूट की स्थापना भी हुई।

1911 में गोपाल कृष्ण गोखले ने प्राथमिक शिक्षा को नि:शुल्क और अनिवार्य करने का प्रयास किया। अंग्रेज़ सरकार और उसके समर्थकों के विरोध के कारण वे सफल न हो सके। 1913 में भारत सरकार ने शिक्षानीति में अनेक परिवर्तनों की कल्पना की। परन्तु प्रथम विश्वयुद्ध के कारण कुछ हो न पाया। प्रथम महायुद्ध के समाप्त होने पर कलकत्ता विश्वविद्यालय आयोग नियुक्त हुआ। आयोग ने शिक्षकों का प्रशिक्षण, इंटरमीडिएट कालेजों की स्थापना, हाई स्कूल और इंटरमीडिएट बोर्डों का संगठन, शिक्षा का माध्यम, ढाका में विश्वविद्यालय की स्थापना, कलकत्ते में कालेजों की व्यवस्था, वैतनिक उपकुलपति, परीक्षा, मुस्लिम शिक्षा, स्त्रीशिक्षा, व्यावसायिक और औद्योगिक शिक्षा आदि विषयों पर सिफारिशें की। बंबई, बंगाल, बिहार, आसाम आदि प्रांतों में प्राथमिक शिक्षा कानून बनाये जाने लगे। माध्यमिक क्षेत्र में भी उन्नति होती गई। छात्रों की संख्या बढ़ी। माध्यमिक पाठ्य में वाणिज्य और व्यवसाय रखे दिए गए। स्कूल लीविंग सर्टिफिकेट परीक्षा चली। अंग्रेजी का महत्व बढ़ता गया। अधिक संख्या में शिक्षकों का प्रशिक्षण होने लगा।

1916 तक भारत में पाँच विश्वविद्यालय थे। अब सात नए विश्वविद्यालय स्थापित किए गए। बनारस हिंदू विश्वविद्यालय तथा मैसूर विश्वविद्यालय 1916 में, पटना विश्वविद्यालय 1917 में, ओसमानिया विश्वविद्यालय 1918 में, अलीगढ़ मुस्लिम विश्वविद्यालय 1920 में और लखनऊ और ढाका विश्वविद्यालय 1921 में स्थापित हुए। असहयोग आंदोलन से राष्ट्रीय शिक्षा की प्रगति में बल और वेग आए। बिहार विद्यापीठ, काशी विद्यापीठ, गौड़ीय सर्वविद्यायतन, तिलक विद्यापीठ, गुजरात विद्यापीठ, जामिया मिल्लिया इस्लामिया आदि राष्ट्रीय संस्थाओं की स्थापना हुई। शिक्षा में व्यावहारिकता लाने की चेष्टा की गई। 1921 से नए शासनसुधार कानून के अनुसार सभी प्रांतों में शिक्षा भारतीय मंत्रियों के अधिकार में आ गई। परंतु सरकारी सहयोग के अभाव के कारण उपयोगी योजनाओं का कार्यान्वित करना संभव न हुआ। प्राय: सभी प्रांतों में प्राथमिक शिक्षा अनिवार्य करने की कोशिश व्यर्थ हुई। माध्यमिक शिक्षा में विस्तार होता गया परंतु उचित संगठन के अभाव से उसकी समस्याएँ हल न हो पाईं। शिक्षा समाप्त कर विद्यार्थी कुछ करने के योग्य न बन पाते। दिल्ली (1922), नागपुर (1923) आगरा (1927), आंध्र (1926) और अन्नामलाई (1926) में विश्वविद्यालय स्थापित हुए। बंबई, पटना, कलकत्ता, पंजाब, मद्रास और इलाहबाद विश्वविद्यालयों का पुनर्गठन हुआ। कालेजों की संख्या में वृद्धि होती गई। व्यावसायिक शिक्षा, स्त्रीशिक्षा, मुसलमानों की शिक्षा, हरिजनों की शिक्षा, तथा अपराधी जातियों की शिक्षा में उन्नति होती गई। अगले शासनसुधार के लिए साइमन आयोग की नियुक्ति हुई। हर्टाग समिति इस आयोग का एक आवश्यक अंग थी। इसका काम था भारतीय शिक्षा की समस्याओं की सागोपांग जाँच करना। समिति ने रिपोर्ट में 1918 से 1927 क प्रचलित शिक्षा के गुण और दोष का विवेचन किया और सुधार के लिए निर्देश दिया।

1930-1935 के बीच संयुक्त प्रदेश में बेकारी की समस्या के समाधान के लिए समिति बनी। व्यावहारिक शिक्षा पर जोर दिया गया। इंटरमीडिएट की पढ़ाई के दो वर्षों में से एक वर्ष स्कूल के साथ कर दिया जाए, जिससे पढ़ाई 11 वर्ष की हो। बाकी एक वर्ष बी.ए. के साथ जोड़कर बी.ए. पाठ्यक्रम तीन वर्ष का कर दिया जाए। माध्यमिक छह वर्ष के दो भाग हों - तीन वर्ष का निम्न माध्यमिक और तीन वर्ष का उच्च माध्यमिक। अंतिम तीन वर्षों में साधारण पढ़ाई के साथ

साथ कृषि, शिल्प, व्यवसाय सिखाए जायँ। समिति की ये सिफारिशें कार्यान्वित नहीं हुई। 1937 में शिक्षा की एक योजना तैयार की गई जो 1938 में बुनियादी शिक्षा के नाम से प्रसिद्ध हुई। सात से 11 वर्ष के बालक बालिकाओं की शिक्षा अनिवार्य हो। शिक्षा मातृभाषा में हो। हिंदुस्तानी पढ़ाई जाए। चरखा, करघा, कृषि, लकड़ी का काम शिक्षा का केंद्र हो जिसकी बुनियाद पर साहित्य, भूगोल, इतिहास, गणित की पढ़ाई हो। 1945 में इसमें परिवर्तन किए गए और परिवर्तित योजना का नाम रखा गया 'नई तालीम'। इसके चार भाग थे - (1) पूर्व बुनियादी, (2) बुनियादी, (3) उच्च बुनियादी और (4) वयस्क शिक्षा। हिंदुस्तानी तालीमी संघ (भारतीय शैक्षिक संघ) पर इसका संचालनभार छोड़ दिया गया।

1945 में द्वितीय विश्वयुद्ध समाप्त होते होते सार्जेंट योजना का निर्माण हुआ। छह से 14 वर्ष की अवस्था के बालकों तथा बालिकाओं के लिए अनिवार्य शिक्षा हो। जूनियर बेसिक स्कूल, सीनियर बेसिक स्कूल, साहित्यिक हाई स्कूल ओर व्यावसायिक हाई स्कूल की पढ़ाई 11 वर्ष की अवस्था से 17 वर्ष की अवस्था तक हो। इसके बाद विश्वविद्यालय में प्रवेश हो। डिग्री पाठ्यक्रम तीन वर्ष का हो। इंटरमीडिएट कक्षा समाप्त कर दी जाए। पाँच से कम अवस्थावालों के लिए नर्सरी स्कूल हो। माध्यम मातृभाषा हो।

1.1.2.3.1 भारत के लिये अंग्रेजों की शिक्षा नीति-

ब्रिटिश काल में शिक्षा में मिशनरियों का प्रवेश हुआ, इस काल में महत्वपूर्ण शिक्षा दस्तावेज में मैकाले का घोषणा पत्र 1835, वुड का घोषणा पत्र 1854, हण्टर आयोग 1882 सम्मिलित हैं। इस काल में शिक्षा का उद्देश्य अंग्रेजों के राज्य के शासन सम्बन्धी हितों को ध्यान में रखकर बनाया गया था।

प्राय: लोग इसे मैकाले की शिक्षा प्रणाली के नाम से पुकारते हैं। लार्ड मैकाले ब्रिटिश पार्लियामेन्ट के ऊपरी सदन (हाउस ऑफ लार्ड्स) का सदस्य था। 1857 की क्रान्ति के बाद जब 1860 में भारत के शासन को ईस्ट इण्डिया कम्पनी से छीनकर रानी विक्टोरिया के अधीन किया गया तब मैकाले को भारत में अंग्रेजों के शासन को मजबूत बनाने के लिये आवश्यक नीतियां सुझाने का महत्वपूर्ण कार्य सौंपा गया था। उसने सारे देश का भ्रमण किया। उसे यह देखकर आश्चर्य हुआ कि यहां झाड़ू देने वाला, चमड़ा उतारने वाला, करघा चलाने वाला, कृषक, व्यापारी (वैश्य), मंत्र पढ़ने वाला आदि सभी वर्ण के लोग अपने-अपने कर्म को बड़ी श्रद्धा से हंसते-गाते कर रहे थे। सारा समाज संबंधों की डोर से बंधा हुआ था। शूद्र भी समाज में किसी का भाई, चाचा या दादा था तथा ब्राहमण भी ऐसे ही रिश्तों से बंधा था। बेटी गांव की हुआ करती थी तथा दामाद, मामा आदि रिश्ते गांव के हुआ करते थे। इस प्रकार भारतीय समाज भिन्नता के बीच भी एकता के सूत्र में बंधा हुआ था। इस समय धार्मिक सम्प्रदायों के बीच भी सौहार्दपूर्ण संबंध था। यह एक ऐतिहासिक तथ्य है कि 1857 की क्रान्ति में हिन्दू-मुसलमान दोनों ने मिलकर अंग्रेजों का विरोध किया था। मैकाले को लगा कि जब तक हिन्दू-मुसलमानों के बीच वैमनस्यता नहीं होगी तथा वर्ण व्यवस्था के अन्तर्गत संचालित समाज की एकता नहीं टूटेगी तब तक भारत पर अंग्रेजों का शासन मजबूत नहीं होगा।

भारतीय समाज की एकता को नष्ट करने तथा वर्णाश्रित कर्म के प्रति घृणा उत्पन्न करने के लिए मैकाले ने वर्तमान शिक्षा प्रणाली को बनाया। अंग्रेजों की इस शिक्षा नीति का लक्ष्य था - संस्कृत, फारसी तथा लोक भाषाओं के वर्चस्व को तोड़कर अंग्रेजी का वर्चस्व कायम करना। साथ ही सरकार चलाने के लिए देशी अंग्रेजों को तैयार करना। इस प्रणाली के जरिए वंशानुगत कर्म के प्रति घृणा पैदा करने और परस्पर विद्वेष फैलाने की भी कोशिश की गई थी। इसके अलावा पश्चिमी सभ्यता एवं जीवन पद्धति के प्रति आकर्षण पैदा करना भी मैकाले का लक्ष्य था। इन लक्ष्यों को प्राप्त करने में ईसाई मिशनरियों ने भी महत्तवपूर्ण भूमिका निभाई। ईसाई मिशनरियों ने ही सर्वप्रथम मैकाले की शिक्षा-नीति को लागू किया। मार्च १८९० में गोपाल कृष्ण गोखले द्वारा पहली बार अनिवार्य प्राथमिक शिक्षा सम्बन्धी प्रस्ताव किया गया था। हर्टांग समिति 1929 ने प्राथमिक विद्यालयों की संख्यात्मक वृद्धि पर बल न देकर गुणात्मक उन्नति पर जोर दिया था। गाँधी जी द्वारा प्रतिपादित बुनियादी शिक्षा का महत्वपूर्ण लक्ष्य, शिल्प आधारित शिक्षा द्वारा बालक का सर्वांगीण विकास कर उसे आत्मनिर्भर आदर्श नागरिक बनाना था। मैकाले ने सुझाव दिया कि अंग्रेजी सीखने से ही विकास सम्भव है।

1.1.2.3.2 स्वतंत्रता के बाद

आजादी के बाद **राधाकृष्ण आयोग** (१९४८-४९), **माध्यमिक शिक्षा आयोग** (मुदालियर आयोग) १९५३, **विश्वविद्यालय अनुदान आयोग** (१९५३), **कोठारी शिक्षा आयोग** (१९६४), **राष्ट्रीय शिक्षा नीति** (१९६८) एवं **नवीन शिक्षा नीति** (१९८६) आदि के द्वारा भारतीय शिक्षा व्यवस्था को समय-समय पर सही दिशा देनें की गंभीर कोशिश की गयी।

1948-49 में विश्वविद्यालयों के सुधार के लिए भारतीय विश्वविद्यालय आयोग की नियुक्ति हुई। आयोग की सिफारिशों को बड़ी तत्परता के साथ कार्यान्वित किया गया। उच्च शिक्षा में पर्याप्त सफलता प्राप्त हुई। पंजाब, गौहाटी, पूना, रुड़की, कश्मीर, बड़ौदा, कर्णाटक, गुजरात, महिला विश्वविद्यालय, विश्वभारती, बिहार, श्रीवेंकटेश्वर, यादवपुर, वल्लभभाई, कुरुक्षेत्र, गोरखपुर, विक्रम, संस्कृत वि.वि. आदि अनेक नए विश्वविद्यालयों की स्थापना हुई। स्वतंत्रताप्राप्ति के पश्चात् शिक्षा में प्रगति होने लगी। विश्वभारती, गुरुकुल, अरविंद आश्रम, जामिया मिल्लिया इसलामिया, विद्याभवन, महिला विश्वक्षेत्र में प्रशंसनीय वनस्थली विद्यापीठ आधुनिक भारतीय शिक्षा के विद्यालय और प्रयोग हैं।

1952-53 में माध्यमिक शिक्षा आयोग ने माध्यमिक शिक्षा की उन्नति के लिए अनेक सुझाव दिए। माध्यमिक शिक्षा के पुनर्गठन से शिक्षा में पर्याप्त सफलता प्राप्त हुई।

1.1.3 मैकाले की शिक्षा पद्धति का शिक्षा का विकास-

मैकाले की प्रासंगिकता और भारत की वर्तमान शिक्षा एवं समाज व्यवस्था में मैकाले प्रभाव : मैकाले नाम हम अक्सर सुनते है मगर ये कौन था? इसके उद्देश्य और विचार क्या थे? कुछ बिन्दुओं की विवेचना का प्रयास करते हैं। मैकाले: मैकाले का पूरा नाम था 'थोमस बैबिंगटन मैकाले' अगर ब्रिटेन के नजरियें से देखें तो अंग्रेजों का ये एक अमूल्य रत्न था। एक उम्दा इतिहासकार, लेखक प्रबंधक, विचारक और देशभक्त इसलिए इसे लार्ड की उपाधि मिली थी और इसे लार्ड मैकाले कहा जाने लगा। अब इसके महिमामंडन को छोड़ मैं इसके एक ब्रिटिश संसद को दिए गए प्रारूप का वर्णन करना उचित समझूंगा जो इसने भारत पर कब्ज़ा बनाये रखने के लिए दिया था।

२ फ़रवरी १८३५ को ब्रिटेन की संसद में मैकाले की भारत के प्रति विचार और योजना मैकाले के शब्दों में..

"मैं भारत के कोने-कोने में घुमा हूँ, मुझे एक भी व्यक्ति ऐसा नहीं दिखाई दिया, जो भिखारी हो ,जो चोर हो, इस देश में मैंने इतनी धन-दौलत देखी है, इतने ऊँचे चारित्रिक आदर्श और इतने गुणवान मनुष्य देखे हैं, की मैं नहीं समझता की हम कभी भी इस देश को जीत पाएँगे, जब तक इसकी रीढ़ की हड्डी को नहीं तोड़ देते जो इसकी आध्यात्मिक और सांस्कृतिक विरासत है और इसलिए मैं ये प्रस्ताव रखता हूँ की हम इसकी पुराणी और पुरातन शिक्षा व्यवस्था, उसकी संस्कृति को बदल डालें,क्योंकि अगर भारतीय सोचने लग गए की जो भी विदेशी और अंग्रेजी है वह अच्छा है और उनकी अपनी चीजों से बेहतर है, तो वे अपने आत्मगौरव और अपनी ही संस्कृति को भुलाने लगेगें और वैसे बन जाएंगे जैसा हम चाहते हैं। एक पूर्णरूप से गुलाम भारत"

कई सेकुलर बंधु इस भाषण की पंक्तियों को कपोल कल्पित कल्पना मानते है। अगर ये कपोल कल्पित पंक्तिया है, तो इन काल्पनिक पंक्तियों का कार्यान्वियन कैसे हुआ? सेकुलर मैकाले की गद्दार औलादे इस प्रश्न पर बगले झांकती दिखती है और कार्यान्वियन कुछ इस तरह हुआ कि आज भी मैकाले व्यवस्था की औलादे छंद सेकुलर वेश में यत्र-तत्र बिखरी पड़ी हैं।

अरे भाई! मैकाले ने क्या नया कह दिया भारत के लिए? भारत इतना सम्पन्न था की पहले सोने चाँदी के सिक्के चलते थे, कागज की नोट नहीं। धन दौलत की कमी होती तो इस्लामिक ताईआता श्वान और अंग्रेजी दलाल यहाँ क्यों आते? लाखों करोड़ रूपये के हीरे जवाहरात ब्रिटेन भेजे गए जिसके प्रमाण आज भी हैं। मगर ये मैकाले का प्रबंधन ही है की आज भी हम लोग दुम हिलाते हैं अंग्रेजी और अंग्रेजी संस्कृति के सामने। हिन्दुस्तान के बारे में बोलने वाला संस्कृति का ठेकेदार कहा जाता है और घृणा का पात्र होता है इस सभ्य समाज का।

शिक्षा व्यवस्था में मैकाले प्रभाव : ये तो हम सभी मानते है की हमारी शिक्षा व्यवस्था हमारे समाज की दिशा एवं दशा तय करती है। बात १८२५ के लगभग की है जब ईस्ट इंडिया कम्पनी वित्तीय रूप से संक्रमण काल से गुजर रही थी

और ये संकट उसे दिवालियेपन की कगार पर पहुँचा सकता था। कम्पनी का काम करने के लिए ब्रिटेन के स्नातक और कर्मचारी अब उसे महंगे पड़ने लगे थे। १८२८ में गवर्नर जनरल विलियम बेंटिक भारत आया जिसने लागत घटने के उद्देश्य से अब प्रशासन में भारतीय लोगों के प्रवेश के लिए चार्टर एक्ट में एक प्रावधान जुड़वाया की सरकारी नौकरी में धर्म जाती या मूल का कोई हस्तक्षेप नहीं होगा। यहाँ से मैकाले का भारत में आने का रास्ता खुला। अब अंग्रेजों के सामने चुनौती थी की कैसे भारतियों को उस भाषा में पारंगत करें जिससे की ये अंग्रेजों के पढ़े लिखे हिंदुस्तानी गुलाम की तरह कार्य कर सकें। इस कार्य को आगे बढाया जनरल कमेटी ऑफ पब्लिक इंस्ट्रक्शन के अध्यक्ष थोमस बैबिंगटन मैकाले ने: मैकाले की सोच स्पष्ट थी, जोकि उसने ब्रिटेन की संसद में बताया जैसा ऊपर वर्णन है। उसने पूरी तरह से भारतीय शिक्षा व्यवस्था को ख़तम करने और अंग्रेजी(जिसे हम मैकाले शिक्षा व्यवस्था भी कहते है) शिक्षा व्यवस्था को लागू करने का प्रारूप तैयार किया। मैकाले के शब्दों में- "हमें एक हिन्दुस्तानियों का एक ऐसा वर्ग तैयार करना है जो हम अंग्रेज शासकों एवं उन करोड़ों भारतीयों के बीच दुभाषिये का काम कर सके, जिन पर हम शासन करते हैं। हमें हिन्दुस्तानियों का एक ऐसा वर्ग तैयार करना है, जिनका रंग और रक्त भले ही भारतीय हों लेकिन वह अपनी अभिरूचि, विचार, नैतिकता और बौद्धिकता में अंग्रेज हों" और देखिये आज कितने ऐसे मैकाले व्यवस्था की नाजायज श्वान रुपी संताने हमें मिल जाएंगी जिनकी मात्रभाषा अंग्रेजी है और धर्म पिता मैकाले इस पद्धति को मैकाले ने सुन्दर प्रबंधन के साथ लागू किया। अब अंग्रेजी के गुलामों की संख्या बढने लगी और जो लोग अंग्रेजी नहीं जानते थे वो अपने आप को हीन भावना से देखने लगे क्योंकि सरकारी नौकरियों के ठाट उन्हें दिखते थे, अपने भाइयों के जिन्होंने अंग्रेजी की गुलामी स्वीकार कर ली और ऐसे गुलामों को ही सरकारी नौकरी की रेवड़ी बटती थी। कालांतर में वे ही गुलाम अंग्रेजों की चापलूसी करते-करते उन्नत होते गए और अंग्रेजी की गुलामी न स्वीकारने वालों को अपने ही देश में दोयम दर्जे का नागरिक बना दिया गया। विडम्बना ये हुए की आजादी मिलते मिलते एक बड़ा वर्ग इन गुलामों का बन गया जो की अब स्वतंत्रता संघर्ष भी कर रहा था। यहाँ भी मैकाले शिक्षा व्यवस्था चाल कामयाब हुई। अंग्रेजों ने जब ये देखा की भारत में रहना असम्भव है तो कुछ मैकाले और अंग्रेजी के गुलामों को सत्ता हस्तांतरण करके ब्रिटेन चले गए। मकसद पूरा हो चुका था। अंग्रेज गए मगर उनकी नीतियों की गुलामी अब आने वाली पीढ़ियों को करनी थी और उसका कार्यान्वयन करने के लिए थे कुछ हिन्दुस्तानी वेश में बौद्धिक और वैचारिक रूप से अंग्रेज नेता और देश के रखवाले (नाम नहीं लूँगा क्योंकि एडविना की आत्मा को कष्ट होगा)कालांतर में ये ही पद्धति विकसित करते रहे। हमारे सत्ता के महानुभाव इस प्रक्रिया में हमारी भारतीय भाषाएँ गौण होती गयी और हिन्दुस्तान में हिंदी विरोध का स्वर उठने लगा। ब्रिटेन की बौद्धिक गुलामी के लिए आज का भारतीय समाज आन्दोलन करने लगा फिर आया उपभोक्तावाद का दौर और मिशनरी स्कूलों का दौर चूँकि २०० साल हमने अंग्रेजी को विशेष और भारतीयता को गौण मानना शुरू कर दिया था तो अंग्रेजी का मतलब सभ्य होना उन्नत होना माना जाने लगा।

हमारी पीढियां मैकाले के प्रबंधन के अनुसार तैयार हो रही थी और हम भारत के शिशु मंदिरों को साम्प्रदायिक कहने लगे क्योंकि भारतीयता और वन्दे मातरम् वहाँ सिखाया जाता था। जब से बहुराष्ट्रीय कम्पनियाँ आयीं उन्होंने अंग्रेजो का इतिहास दोहराना शुरू किया और हम सभी सभ्य बनने में उन्नत बनने में लगे रहे। **मैकाले की पद्धति के अनुसार-** अब आज वर्तमान में हमें नौकरी देने वाली हैं। अंग्रेजी कम्पनियाँ जैसे ईस्ट इंडिया थी, अब ये ही कम्पनियाँ शिक्षा व्यवस्था भी निर्धारित करने लगी और फिर बात वही आयी कम लागत वाली, तो उसी तरह का अवैज्ञानिक व्यवस्था बनाओं जिससे कम लागत में हिन्दुस्तानियों के श्रम एवं बुद्धि का दोहन हो सके। एक उदहारण देता हूँ कुकुरमुत्ते की तरह हैं इंजीनियरिंग और प्रबंधन संस्थान, मगर शिक्षा पद्धति ऐसी है कि १००० इलेक्ट्रानिक्स इंजीनियरिंग स्नातकों में से शायद १० या १५ स्नातक ही रेडियो या किसी उपकरण की मरम्मत कर पायें। नयी शोध तो दूर की कौड़ी है, अब ये स्नातक इन्ही अंग्रेजी बहुराष्ट्रीय कम्पनियों के पास जातें है और जीवन भर की प्रतिभा ५ हजार रूपए प्रति महीने पर गिरवी रख गुलामों सा कार्य करते है फिर भी अंग्रेजी की ही गाथा सुनाते है अब जापान की बात करें १०वीं में पढने वाला छात्र भी प्रयोगात्मक ज्ञान रखता है, किसी मैकाले का अनुसरण नहीं करता। अगर कोई संस्थान अच्छा है जहाँ भारतीय प्रतिभाओं का समुचित विकास करने का परिवेश है तो उसके छात्रों को ये कम्पनियाँ किसी भी कीमत पर नासा और इंग्लैंड में बुला लेती है और हम मैकाले के गुलाम खुशिया मनाते है कि हमारा फला अमेरिका में नौकरी करता है। इस प्रकार मैकाले की एक सोच ने हमारी आने वाली शिक्षा व्यवस्था को इस तरह पंगु बना दिया की न चाहते हुए भी हम उसकी गुलामी में फँसते जा रहें है।

समाज व्यवस्था में मैकाले प्रभाव : अब समाज व्यवस्था की बात करें तो शिक्षा से समाज का निर्माण होता है। शिक्षा अंग्रेजी में हुए तो समाज खुद ही गुलामी करेगा। वर्तमान परिवेश में MY HINDI IS A LITTLE BIT WEAK बोलना स्टेटस सिम्बल बन रहा है, जैसा मैकाले चाहता था कि हम अपनी संस्कृति को हीन समझे, मैं अगर कहीं यात्रा में हिंदी बोल दूँ मेरे साथ का सहयात्री सोचता है कि ये पिछड़ा है लोग सोचते है त्रुटी हिन्दी में हो जाए चलेगा मगर अंग्रेजी में नहीं होनी चाहिए और अब हिंगलिश भी आ गयी है बाज़ार में, क्या ऐसा नहीं लगता कि इस व्यवस्था का हिंदुस्तानी धोबी का कुत्ता न घर का न घाट का होता जा रहा है। अंग्रेजी जीवन में पूर्ण रूप से नहीं सीख पाया क्योंकि विदेशी भाषा है और हिन्दी वो सीखना नहीं चाहता क्योंकि बेइज्जती होती है। हमें अपने बच्चे की पढाई अंग्रेजी विद्यालय में करानी है क्योंकि दौड़ में पीछे रह जाएगा। माता-पिता भी क्या करें? बच्चे को क्रांति के लिए भेजेंगे क्या? क्योंकि आज अंग्रेजी न जानने वाला बेरोजगार है स्वरोजगार के संसाधन ये बहुराष्ट्रीय कम्पनियाँ खत्म कर देंगी फिर गुलामी तो करनी ही होगी तो क्या हम स्वीकार कर लें ये सब? या हिन्दी पढ़कर समाज में उपेक्षा के पात्र बने? शायद इसका एक ही उत्तर है हमे वर्तमान परिवेश में हमारे पूर्वजों द्वारा स्थापित उच्च आदर्शों को स्थापित करना होगा। हमें विवेकानन्द का "स्व" और क्रांतिकारियों का देश दोनों को जोड़ कर स्वदेशी की कल्पना को मूर्त रूप देने का प्रयास करना होगा चाहे भाषा हो या खान-पान या रहन-सहन। पोशाक अगर मैकाले की व्यवस्था को तोड़ने के लिए मैकाले की व्यवस्था में जाना पड़े तो जाएँ, जैसे मैं अंग्रेजी गूगल का इस्तेमाल करके हिन्दी लिख रहा हूँ क्योंकि कीचड़ साफ करने के लिए हाथ गंदे करने होंगे हर कोई छंद सेकुलर बनकर सफ़ेद पोशाक पहन कर मैकाले के सुर में गायेगा तो आने वाली पीढियां हिन्दुस्तान को ही मैकाले का भारत बना देंगी, उन्हें किसी ईस्ट इंडिया की जरुरत ही नहीं पड़ेगी गुलाम बनने के लिए और शायद हमारे आदर्शो राम और कृष्ण को एक कार्टून मनोरंजन का पात्र।

1.1.4 शिक्षा के क्षेत्र में समस्याएं-

भारत में शिक्षा प्रणाली के सामने आने वाली समस्याओं निम्न हैं-

1. प्रौद्योगिकी का दत्तक ग्रहण

शिक्षण में तकनीकी उपकरणों के प्रभावी उपयोग में कई लाभ हैं। यह बुनियादी ढांचे, गुणवत्ता की कई समस्याओं का समाधान करेगा

2. शिक्षक प्रशिक्षण

शिक्षकों का प्रशिक्षण भारत की विशाल शिक्षा प्रणाली के सबसे अराजक, उपेक्षित और कम क्षेत्रों में से एक है। इसे बदलने की जरूरत है क्योंकि वे अपने हाथों में भविष्य की पीढ़ियों के भाग्य को पकड़ते हैं

3. अधिक सरकारी खर्च

भारत सकल घरेलू उत्पाद (जीडीपी) के शैक्षिक क्षेत्र की ओर 6% हिस्सेदारी रखने की दिशा में लक्षित है, प्रदर्शन निश्चित रूप से अपेक्षाओं से कम गिर गया है इंफ्रास्ट्रक्चर के निर्माण पर खर्च करने के लिए फंडिंग भी आवश्यक है

4. समावेशी शिक्षा प्रणाली

शिक्षा क्षेत्र के विकास में ग्रामीण, शहरी गरीब, महिला पिछड़ा वर्ग आदि जैसे समाज के सभी वर्ग शामिल किए जाने चाहिए।

5. गुणवत्ता शिक्षा

शिक्षा को छात्र की जरूरतों को पूरा करना चाहिए। जैसे सुनवाई विकलांग या धीमी शिक्षार्थियों के लिए उपलब्ध कराई गई यह उन्हें अपने कौशल को बढ़ाने और बेहतर रोजगार के विकल्प प्राप्त करने की अनुमति देनी चाहिए

6. पीपीपी मॉडल

सार्वजनिक निजी स्रोत और राष्ट्रीय विकास में निजी क्षेत्र की सक्रिय भागीदारी को प्रोत्साहित करना। जरूरतों को पूरा करने के लिए सार्वजनिक संसाधनों का अपर्याप्त होने का अनुमान लगाया जाने पर इसे अधिक मजबूती से वकालत की जाती है।

7. आईईएस

एक अखिल भारतीय शिक्षा सेवाएं स्थापित की जानी चाहिए जो शिक्षाविदों के परामर्श से शिक्षा की नीतियों का निर्णय लेंगे

8. शिक्षा नीति

शैक्षिक नीति को लगातार अद्यतन की आवश्यकता है इसमें छात्र के व्यक्तित्व विकास पहलू को शामिल करना चाहिए, यह संस्कृति और सामाजिक सेवाओं के मूल्यों को भी प्राप्त करना चाहिए

9. आधुनिक शिक्षा प्रणाली में गुणवत्ता और नैतिकता में कमी

आज के समय में शिक्षा प्रणाली में गुणवत्ता और नैतिकता में कमी आ रही है, हम इस बात को झूठ नहीं मान सकते है।

आधुनिक शिक्षा प्रणाली में दोष यह है कि यहाँ शिक्षा की द्वैध प्रणाली है। बड़े घरों के बच्चो के लिए अंग्रेजी माध्यम के पब्लिक स्कूल और साधारण घरो के बच्चो के लिए भारतीय भाषाओ के माध्यम वाले सरकारी व अर्द्ध-सरकारी विद्यालय हैं। इससे भेद-भाव की भावना आती है और बच्चों में आगे फर्क जाता है, उनके स्कूल के साथ-साथ उनकी शिक्षा भी बाँट दी गई है।

आधुनिक शिक्षा प्रणाली में शिक्षा, शिक्षा नहीं रही है। यह एक दिखावा और व्यापार और एक रेस की तरह बन गया है। बच्चों के मन में यही चलता रहता है मेरे सबसे ज्यादा अंक और किसी के नहीं| बच्चों से लेकर उनके माता-पिता के मन में दूसरों के प्रति जलन भावना है हमारा बच्चा पीछे न रह जाए।

गुणवत्ता और नैतिकता तो रह ही नहीं गई है। कोई किसी भी मदद और बात नहीं करना चाहता। आपस में कोई मिलकर रहना नहीं चाहता। सब आगे बढ़ने में लगे है। एक दूसरे को आगे बढ़ते नहीं देख सकते। दया, भावना, प्यार सब खत्म हो गया है, आगे बढ़ने की चक्कर में।

आधुनिक शिक्षा में बस आगे बढ़ना सिखाया जाता है, बाकी संस्कार जैसी बाते खत्म होती जा रही है| पहले बच्चे स्कूल में बहुत कुछ सीखता था लेकिन अब वह पढ़ाई के अलावा और कुछ नहीं सीखता।

10. मुख्य समस्या शासन की गुणवत्ता (Abysmal Quality of Governance) में कमी मानी गई है।

11. शिक्षा प्रणाली "समावेशी" नहीं है।

12. शिक्षक प्रबंधन, शिक्षक की शिक्षा और प्रशिक्षण, स्कूल प्रशासन और प्रबंधन के स्तर पर कमी।

13. पाठ्यक्रमों में व्यावहारिकता की कमी।

14. स्कूल स्तर के आँकड़ों की अविश्वसनीयता।

15. आर्थिक रूप से कमजोर वर्गों (EWS) के लिये किये गए प्रावधानों को लागू न किया जाना।

16. शिक्षा के अधिकार अधिनियम (RTE) को जमीनी स्तर पर लागू न किया जाना इत्यादि।

17. अवसंरचना का अभाव।

18. शिक्षा संस्थानों की खराब वैश्विक रैंकिंग।

19. प्रदान की गई शिक्षा और उद्योग के लिये आवश्यक शिक्षा के बीच अंतर।

20. महंगी उच्च शिक्षा।

21. लैंगिक मुद्दे।

22. भारतीय बच्चों के लिये आधारभूत सुविधाओं की कमी।

पहली पीढ़ी के स्कूल जाने वालों की समस्याएं क्या हैं?

1. पारिवारिक पृष्ठभूमि और समर्थन

ऐसे बच्चों के लिए पारिवारिक पृष्ठभूमि काफी अलग है अन्य छात्रों के रूप में उन्हें एक ही समर्थन प्राप्त नहीं हो सकता है और इसमें बहुत अधिक मनोवैज्ञानिक असर होगा। कभी-कभी कभी उनका परिवार; वाई अपने संसाधनों को पूरा नहीं कर सकता

2. विभिन्न सामाजिक-आर्थिक अवसर

पहली पीढ़ी के स्कूल जाने वाले गरीब या निचले मध्य वर्ग से आ सकते हैं इसलिए अन्य छात्रों की तुलना में उनके लिए कम सामाजिक-आर्थिक अवसर हैं।

3. उन पर बहुत अधिक दबाव

पहली पीढ़ी के स्कूल्स के लोग बहुत दबाव लेते हैं क्योंकि उनके परिवार में बहुत उम्मीदें हैं।

4. घर पर मार्गदर्शन का अभाव

किसी भी परिवार में अपने अध्ययन में समस्याओं को हल करने में सक्षम नहीं है क्योंकि परिवार के अन्य सदस्य निरक्षर हैं। उस स्थिति में उन्हें स्कूल में मार्गदर्शन पर मोटे तौर पर भरोसा करना पड़ता है।

5. असुरक्षा की भावना

उनके प्रति दृष्टिकोण अलग हो सकता है जो उनके बीच असुरक्षित भावना पैदा करेगा।

1.1.5 शिक्षा के क्षेत्र में विभिन्न आयोगों के सुझाव :-

1.1.5.1 हन्टर शिक्षा आयोग-

हन्टर शिक्षा आयोग की स्थापना ब्रिटिश शासनकाल में लॉर्ड रिपन (1880-1884 ई.) द्वारा 1882 ई. में की गई थी। चार्ल्स वुड के घोषणा पत्र द्वारा शिक्षा के क्षेत्र में हुई प्रगति की समीक्षा के लिए सरकार ने विलियम विलसन हन्टर की अध्यक्षता में इस आयोग की नियुक्ति की थी। इस आयोग में आठ भारतीय सदस्य भी थे। 'हन्टर शिक्षा आयोग' को प्राथमिक शिक्षा एवं माध्यमिक शिक्षा की समीक्षा तक ही सीमित कर दिया गया था।

प्रमुख बातें

- प्राथमिक शिक्षा व्यवहारिक हो।
- प्राथमिक शिक्षा देशी भाषाओं में हो।
- शैक्षिक रूप से पिछड़े इलाकों में शिक्षा विभाग स्थापित हो।
- धार्मिक शिक्षा को प्रोत्साहन न दिया जाए।
- बालिकाओं के लिए सरल पाठ्यक्रम व निःशुल्क शिक्षा की व्यवस्था हो।
- अनुदान सहायता छात्र-शिक्षक की संख्या व आवश्यकता के अनुपात में दिया जाए।
- देशी शिक्षा के पाठ्यक्रम में परिवर्तन न करके पूर्ववत चलने दिया जाए।

❖ **आयोग के सुझाव**

'हन्टर शिक्षा आयोग' ने जो महत्त्वपूर्ण सुझाव दिए, वे निम्नलिखित थे-

1. हाई स्कूल स्तर पर दो प्रकार की शिक्षा की व्यवस्था हो, जिसमें एक व्यवसायिक एवं व्यापारिक शिक्षा दिये जाने पर बल दिया जाये तथा दूसरी ऐसी साहित्यिक शिक्षा दी जाये, जिससे विश्वविद्यालय में प्रवेश हेतु सहायता मिले।
2. प्राथमिक स्तर पर शिक्षा के महत्व पर बल एवं स्थानीय भाषा तथा उपयोगी विषय में शिक्षा देने की व्यवस्था की जाये।
3. शिक्षा के क्षेत्र में निजी प्रयासों का स्वागत हो, लेकिन प्राथमिक शिक्षा उसके बगैर भी दी जाये।
4. प्राथमिक स्तर पर शिक्षा का नियंत्रण ज़िला व नगर बोर्डों को सौंप दिया जाये।

❖ **शिक्षा में सुधार**

उच्च शिक्षा के क्षेत्र में सरकार से अनुरोध किया गया कि वह इन संस्थाओं पर अपने नियंत्रण के अधिकार को वापस ले ले। आयोग ने महिला शिक्षा के क्षेत्र में पर्याप्त व्यवस्था न होने के कारण चिन्ता व्यक्त की। आयोग के सुझाव के बाद माध्यमिक एवं कॉलेज स्तर की शिक्षा के क्षेत्र में महत्त्वपूर्ण परिवर्तन आये। 1882 ई. में पंजाब एवं 1887 ई. में 'इलाहाबाद विश्वविद्यालय' की स्थापना हुई। 1882 से 1902 ई. के मध्य शिक्षा के क्षेत्र में हुए विस्तार को निम्नलिखित आंकड़ों से देखा जा सकता है-

1. 1881-1882 ई. में जहाँ माध्यमिक पाठशालाओं की संख्या 3,916 थी, वहीं 1901-1902 ई. में यह बढ़कर 5,124 हो गई।
2. इन पाठशालाओं में छात्रों की संख्या, जो 1881-1882 ई. में 2,14,077 थी, 1901-1902 ई. में बढ़कर 4,90,129 हो गई।
3. व्यवसायिक एवं तकनीक कॉलेजों की संख्या, जो 1881-1882 ई. में मात्र 72 थी, 1901-1902 ई. में बढ़कर 191 हो गई।

1.1.5.2 लॉर्ड कर्जन-

जॉर्ज नथानिएल कर्जन अथवा लॉर्ड कर्जन (अंग्रेज़ी: George Nathaniel Curzon), ऑर्डर ऑफ़ गेटिस, ऑर्डर ऑफ द स्टार ऑफ इंडिया, ऑर्डर ऑफ़ इण्डियन एम्पायर, यूनाइटेड किंगडम के प्रिवी काउंसिल (11 जनवरी 1859 – 20 मार्च 1925), जिन्हें **द लॉर्ड** कर्जन ऑफ़ केड्लेस्टन 1898 से 1911 के मध्य और द अर्ल कर्जन ऑफ़ केड्लेस्टन 1911 से 1921 तक के नाम से भी जाना जाता है, ब्रिटेन कंजर्वेटिव पार्टी के पूर्व राजनीतिज्ञ थे जो भारत के वायसराय एवं विदेश सचिव बनाये गये थे।

चित्र 1.1 लार्ड कर्जन

1901 में लार्ड कर्ज़न ने शिमला में एक गुप्त शिक्षा सम्मेलन किया था जिसें 152 प्रस्ताव स्वीकृत हुए थे। इसमें कोई भारतीय नहीं बुलाया गया था और न सम्मेलन के निर्णयों का प्रकाशन ही हुआ। इसको भारतीयों ने अपने विरुद्ध रचा

हुआ षड्यंत्र समझा। कर्ज़न को भारतीयों का सहयोग न मिल सका। प्राथमिक शिक्षा की उन्नति के लिए कर्ज़न ने उचित रकम की स्वीकृति दी, शिक्षकों के प्रशिक्षण की व्यवस्था की तथा शिक्षा अनुदान पद्धति और पाठ्यक्रम में सुधार किया। कर्ज़न का मत था कि प्राथमिक शिक्षा मातृभाषा के माध्यम से ही दी जानी चाहिए। माध्यमिक स्कूलों पर सरकारी शिक्षाविभाग और विश्वविद्यालय दोनों का नियंत्रण आवश्यक मान लिया गया। आर्थिक सहायता बढ़ा दी गई। पाठ्यक्रम में सुधार किया गया। कर्जन माध्यमिक शिक्षा के क्षेत्र में सरकार का हटना उचित नहीं समझता था, प्रत्युत सरकारी प्रभाव का बढ़ाना आवश्यक मानता था। इसलिए वह सरकारी स्कूलों की संख्या बढ़ाना चाहता था। लार्ड कर्जन ने विश्वविद्यालय और उच्च शिक्षा की उन्नति के लिए 1902 में भारतीय विश्वविद्यालय आयोग नियुक्त किया। पाठ्यक्रम, परीक्षा, शिक्षण, कालेजों की शिक्षा, विश्वविद्यालयों का पुनर्गठन इत्यादि विषयों पर विचार करते हुए आयोग ने सुझाव उपस्थित किए। इस आयोग में भी कोई भारतीय न था। इस पर भारतीयों में क्षोभ बढ़ा। उन्होंने विरोध किया। 1904 में भारतीय विश्वविद्यालय कानून बना। पुरातत्व विभाग की स्थापना से प्राचीन भारत के इतिहास की सामग्रियों का संरक्षण होने लगा। 1905 के स्वदेशी आंदोलन के समय कलकत्ते में जातीय शिक्षा परिषद् की स्थापना हुई और नैशनल कालेज स्थापित हुआ जिसके प्रथम प्राचार्य अरविंद घोष थे। बंगाल टेकनिकल इन्स्टिट्यूट की स्थापना भी हुई।

1.1.5.3 सैडलर आयोग-

सैडलर आयोग का गठन 1917 ई. में 'कलकत्ता विश्वविद्यालय' की समस्याओं के अध्ययन के लिए डॉक्टर एम.ई. सैडलर के नेतृत्व में किया गया था। इस आयोग में दो भारतीय भी, डॉक्टर आशुतोष मुखर्जी एवं डॉक्टर जियाउद्दीन अहमद, सदस्य थे। इस आयोग ने कलकत्ता विश्विद्यालय के साथ-साथ माध्यमिक स्नातकोत्तरीय शिक्षा पर भी अपना मत व्यक्त किया।

❖ **प्रमुख सुझाव :-**

सैडलर आयोग ने 1904 ई. के 'विश्विद्यालय अधिनियम' की कड़े शब्दों में निंदा की। आयोग ने अपने सुझाव भी दिए जो निम्नलिखित थे-

1. इंटर व उत्तर माध्यमिक परीक्षा को माध्यमिक तथा विश्वविद्यालयी शिक्षा के मध्य विभाजन रेखा मानना चाहिए।
2. स्कूली शिक्षा 12 वर्ष की होनी चाहिए।
3. ऐसी शिक्षण संस्थायें स्थापित करने का सुझाव दिया गया, जो इण्टरमीडिएट महाविद्यालय कहलायें। ये महाविद्यालय चाहे तो स्वतन्त्र रहें या फिर हाई स्कूल से सम्बद्ध हो जायें।
4. इन संस्थाओं के प्रशासन हेतु माध्यमिक तथा उत्तर माध्यमिक शिक्षा बोर्ड के निर्माण की सिफारिश की गई।
5. इण्टरमीडिएट के बाद स्नातक स्तर की शिक्षा तीन वर्ष की होनी चाहिए।
6. आयोग ने पास तथा ऑनर्स व साधारण तथा प्रवीण्य पाठ्यक्रम शुरू करने का भी सुझाव दिया।
7. विश्वविद्यालयों को यह सुझाव भी दिया गया था, कि बहुत सख्त नियम न बनाये जायें।
8. प्राचीन सम्बद्ध विश्वविद्यालयों की जगह पूर्ण स्वायत्त आवासीय एवं एकात्मक स्वरूप के विश्वविद्यालयों की स्थापना का सुझाव दिया गया।
9. 'कलकत्ता विश्वविद्यालय' के कार्य के भार को कम करने के लिए आयोग ने ढाका में 'एकाकी विश्वविद्यालय' की स्थापना का सुझाव दिया।
10. आयोग ने ढाका एवं कलकत्ता विश्वविद्यालयों में अध्यापकों के प्रशिक्षण के लिए

    शिक्षा विभाग खोलने की सलाह दी।
11. आयोग ने व्यावसायिक कॉलेज खोलने की ओर भी सरकार का ध्यान खींचा।

12. 'सैडलर आयोग' के सुझाव पर उत्तर प्रदेश में एक 'बोर्ड ऑफ़ सेंकेडरी एजूकेशन' की

स्थापना हुई।

❖ **विश्वविद्यालयों की स्थापना**

1913 ई. की 'शिक्षा सम्बन्धी नीति' एवं 1917 ई. के 'सैडलर आयोग' के सुझावों के बाद 1916 ई. में 'मैसूर विश्वविद्यालय', 1916 ई. में 'बनारस विश्वविद्यालय', 1917 ई. में 'पटना विश्वविद्यालय', 1918 ई. में 'उस्मानिया विश्वविद्यालय', 1920 ई. में 'अलीगढ़ विश्वविद्यालय' एवं 1921 ई. में 'लखनऊ विश्वविद्यालय' की स्थापना हुई। विश्वविद्यालय के संचालन का जिम्मा प्रांतों का हो गया।

1.1.5.4 हर्टांग समिति-

हार्टोग समिति का गठन 1929 ई. में 'भारतीय परिनीति आयोग' ने सर फ़िलिप हार्टोग के नेतृत्व में किया था। शिक्षा के विकास पर रिपोर्ट प्रस्तुत करने हेतु इस समिति का गठन किया गया था। हर्टोग समिति ने प्राथमिक शिक्षा के महत्व की बात कही थी।

माध्यमिक शिक्षा के बारे में समिति ने मैट्रिक स्तर पर विशेष बल दिया।

- ग्रामीण अंचलों के विद्यालयों को समिति ने वर्नाक्यूलर मिडिल स्तर के स्कूल पर ही रोक कर उन्हें व्यावसायिक या फिर औद्योगिक शिक्षा देने का सुझाव दिया।
- विश्वविद्यालयों में किये गये अनुपयोगी प्रवेशों से शिक्षा का स्तर गिर रहा था। इसलिए समिति ने विश्वविद्यालय को अपने सुझाव दिए।
- सुझाव में कहा गया था कि विश्वविद्यालय ऐसे ही छात्र को प्रवेश दे एवं उसके लिए उच्च शिक्षा की व्यवस्था करे, जो उसके योग्य हों।
- हार्टोग समिति की सिफारिश के आधार पर 1935 ई. में 'केन्द्रीय शिक्षा सलाहकार बोर्ड' का पुनर्गठन किया गया।

1.1.5.5 सारजेंट शिक्षा योजना-

सारजेंट शिक्षा योजना (अंग्रेज़ी: Sergeant Scheme) भारतीय स्वतंत्रता से पहले सन् १९४४ में ब्रिटिश-भारतीय सरकार द्वारा तैयार की गई एक योजना थी जिसका ध्येय भारत को ४० वर्षों के अन्दर (यानि सन् १९८४ तक) पूर्णतः साक्षर बनाना था। इसमें शिक्षा और साक्षरता के विस्तार के मनसूबे थे जिनके परिपालन से ब्रिटिश सरकार देशभर में पाठशालाओं का जाल फैलाने और हर भारतीय को १९८४ तक पढ़ा-लिखा बनाने का ज़िम्मा लेने वाली थी।

चित्र -1.2 सारजेंट योजना का ध्येय हर भारतीय को १९८४ तक साक्षर बनाना था (१९२७ में खींची गई आंध्र प्रदेश के कस्तूरी देवी पाठशाला की तस्वीर)

❖ **योजना**

सारजेंट योजना का औपचारिक नाम 'भारत में युद्ध-उपरान्त शिक्षा विकास पर सारजेंट कमीशन की रिपोर्ट' (Report of the Sergeant Commission on Post-War Education Development in India, रिपोर्ट ऑफ़ द सारजेंट कमिशन ऑन पोस्ट-वॉर ऍजुकेशन डॅवॅलप्मॅन्ट इन इण्डिया) था। सारजेंट योजना के तहत ६ से ११ वर्षों के हर भारतीय बच्चे को अनिवार्य रूप से मुफ़्त शिक्षा प्रदान करने का ज़िम्मा ब्रिटिश-भारतीय सरकार का होता। यह प्रस्ताव केन्द्रीय शिक्षा सलाहकार समिति के सामने रखा गया और इसको पूरी मंज़ूरी दे दी गई।

जब प्रस्ताव के समाचार अख़बारों में आए, तो राष्ट्रवादी नेताओं ने खुलकर इसकी बहुत खिल्ली उड़ाई क्योंकि उनके अनुसार 'भारत में इतना सब्र नहीं है कि वह ४० साल तक बिना पूरा साक्षर हुए बैठ सके'। यह बात और है कि स्वतंत्रता के बाद २००९ तक (यानि सारजेंट प्रस्ताव के ६५ सालों बाद) भी अर्थशास्त्री अमर्त्य सेन को कहना पड़ा कि 'देश अभी भी आधा अनपढ़ है, दो-तिहाई स्त्रियाँ अनपढ़ हैं'। सन् २००८ तक भारतीय साक्षरता स्तर केवल ६५% पहुँचा था और हर वर्ष केवल १.५% की 'धीमी गति' पर बढ़ रहा था।

1.1.5.6 राधाकृष्ण आयोग-

राधाकृष्ण आयोग या **विश्वविद्यालय शिक्षा आयोग** भारत सरकार द्वारा १९४८ के नवम्बर माह में भारतीय विश्वविद्यालयी शिक्षा की अवस्था पर रिपोर्ट देने के लिये नियुक्त किया गया था। १९४७ में भारत के आजाद होने के बाद इस बात की आवश्यकता अनुभव की गयी कि देश की विश्वविद्यालयी शिक्षा का पुनर्रचना की जाय ताकि वह राष्ट्रीय एवं सांस्कृतिक पुनरुत्थान में सहायक हो, साथ ही वैज्ञानिक, तकनीकी एवं अन्य प्रकार के मानवशक्ति का विकास सुनिश्चित करे।

इस आयोग के अध्यक्ष डॉ सर्वपल्ली राधाकृष्णन थे।

राधाकृष्ण आयोग या जिसे हम विश्वविद्यालय शिक्षा आयोग भी कहते है भारत सरकार द्वारा नवम्बर १९४८ में भारतीय विश्वविद्यालयी शिक्षा की अवस्था पर रिपोर्ट देने के लिये नियुक्त किया गया था। यह आयोग ४ नवम्बर १९४८ को नियुक्त किया गया था । इस आयोग ने २५ अगस्त, १९४९ को अपनी रिपोर्ट भारत सरकार को सौंप दी । डॉ. राधाकृष्णन इस आयोग के अध्यक्ष थे इस लिये इसे राधाकृष्णन आयोग के रूप में जाना जाता है। यह स्वतंत्र भारत का पहला शिक्षा आयोग था । इसे विश्वविद्यालय आयोग भी कहा जाता है क्यूंकि इसकी नियुक्ति विश्वविद्यालय स्तर की शिक्षा व्यवस्था, संरचना की जाँच करना और तत्कालीन समस्याओं का पता लगाकर इस के सन्दर्भ में भारत सरकार को आवश्यक सझुाव देना था ।

जाँच के विषय इस प्रकार थे...

- तत्कालीन विश्वविद्यालयों का अध्ययन करना और उनकी समस्याओ का पता लगाना।
- प्रशासन और वित्त के बारे में सुझाव देना।
- उच्च शिक्षा के लक्ष्यो को निर्धारित करना।
- उच्च शिक्षा के विषय में अपनी राय देना।
- उच्च शिक्षा के शिक्षण स्तर को बढ़ाना।
- विद्यार्थियों के कल्याण के लिए योजनाएं प्रस्तुत करना।
- विद्यार्थियों में उपस्थित अनुशासनहीनता का समाधान खोजना।
- उच्च शिक्षा के शिक्षकों की नियुक्ति, वेतनमान और सेवा शर्तो के बारे में सुझाव देना।
- विश्वविद्यालय शिक्षा के माध्यम अवधि और पाठ्यक्रम के बारे में सुझाव प्रस्तुत करना।

राधाकृष्णन आयोग की मुख्य सिफारिशें :-

आयोग ने विश्वविद्यालय शिक्षा के सभी अंगो के सम्बन्ध में अपने विचार प्रस्तुत किये और उन में सुधार के लिए ठोस सुझाव दिए जो इस प्रकार के है -

१. शिक्षा के लक्ष्य :

- लोकतंत्र के लिए प्रशिक्षित करना।
- आत्म-विश्वास के लिए प्रशिक्षण देना।
- वर्तमान और साथ ही अतीत की समझ विकसित करना।
- व्यावसायिक और पेशेवर प्रशिक्षण प्रदान करना।
- ज्ञान के विकास के द्वारा जीवन जीने की सहज क्षमता को जगाना।
- कुछ मूल्यों को विकसित करना जैसे- मन की निडरता, विवेक शक्ति और उद्देश्य की अखंडता।
- अपनी सांस्कृतिक विरासत के उत्थान के लिए विद्यार्थियों को इससे परिचित कराना।

२. शिक्षण संकाय :

- आयोग के अनुसार शिक्षकों को चार श्रेणियों में विभाजित किया जाए- प्रोफेसर, पाठक, व्याख्याता, और प्रशिक्षक।
- योग्यता के आधार पर ही एक श्रेणी से दूसरे में पद्दोनति की जाए।
- आयोग ने चारों श्रेनणयों के शिक्षकों के लिए उच्च वेतन और बेहतर सेवा शर्तो जैसे- भविष्य निधि, आवासीय आवास, काम के घंटे और छुट्टी आदि के लाभ की सिफारिश की।
- शिक्षण कार्य सप्ताह में 18 घंटे से अधिक नहीं दिया जाना चाहिए।
- शिक्षकों के अध्ययन के लिए एक बार में एक वर्ष का और सम्पूर्ण सेवा काल में 3 वर्ष का अवकाश दिया जाना चाहिए।
- सेवा से अवकाश की उम्र 60 से बढ़ाकर 64 वर्ष कर दी गयी।

३. शिक्षण का स्तर :

- विश्वविद्यालयों में 3000 से अधिक और उनसे सम्बंधित महाविद्यालयों में 1500 से अधिक विद्यार्थियों की संख्यां नहीं होनी चाहिए।
- विश्वविद्यालयों और महाविद्यालयों में उन्ही विद्यार्थियों को प्रवेश देना चाहिए जो १२ वर्ष की विद्यालयी शिक्षा प्राप्त कर चुके हैं।
- कार्य दिवसों की संख्या- एक साल में 180 (परीक्षा के नदनों को छोड़कर)।
- अध्ययन के किसी भी कोर्स के लिए पाठ्य पुस्तक निर्धारित नहीं की जानी चाहिए।
- सायंकालीन कक्षाओं का आरम्भ किया जाना चाहिए।
- परीक्षाओं के स्तर को उठाने के लिए प्रथम, द्वितीय और तृतीया श्रेणी के लिए न्यूनतम प्राप्तांक क्रमश 70, 55 और 40 प्रतिशद होने चाहिए।

४. विश्वविद्यालय का प्रशासन और वित्त :

- उच्च शिक्षा को समवर्ती सूचि में रखा जाना चाहिए। केंद्र और राज्य सरकारों को इसमें साझी ज़िम्मेदारी निभानी चाहिए।
- शिक्षा से सम्बंधित नीतिया बनाने का कार्य केंद्र सरकार का होगा और राज्य सरकार उन नीतियों को अपने राज्यों में लागू करेंगी।
- विश्वविद्यालयों में एक रूपता लाने और महाविद्यालयों और विश्वविद्यालयों को अनदुान प्रदान करने के लिए विश्वविद्यालय अनुदान आयोग की स्थापना की जानी चाहिए।

५. विश्वविद्यालय शिक्षा की संरचना और संगठन :

- उच्च शिक्षा तीन स्तरों पर आयोजित की जानी चाहिए - स्नातक (3 वर्ष), स्नातकोत्तर (2 वर्ष) और शोध (न्यनूतम 2 वर्ष)।
- उच्च शिक्षा को 3 श्रेणियों में बांटा जाना चाहिए - कला, विज्ञान, व्यावसायिक और तकनीकी।
- कला, विज्ञान, व्यावसायिक और तकनीकी विषयों के लिए विश्वविद्यालयों में अलग अलग विभाग खोले जाने चाहिए।
- कृषि, वाणिज्य, इंजिनीरिंग, प्रद्योगिकी, चिकित्सा और शिक्षण प्रशिक्षण के लिए स्वतंत्र संबद्ध कॉलेजों की स्थापना की जानी चाहिए।

६. व्यावसायिक शिक्षा :

विश्वविद्यालय शिक्षा आयोग ने इसे छह श्रेणियों में बांटा है-

१. शिक्षक शिक्षा

२. कृषि शिक्षा

३. वाणिज्य शिक्षा

४. इंजिनीरिंग और तकनिकी शिक्षा

५. चिकित्सा शिक्षा तथा

६. क़ानूनी शिक्षा

1.1.5.7 माध्यमिक शिक्षा आयोग-

स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात भारतीयों के हृदय में देश की शीघ्र प्रगति के लिए असीम उत्साह था। देश के स्वतंत्रता संग्राम के नेताओं ने देश चहुमुखी विकास के लिए बड़े-बड़े स्वप्न संजोए हुए थे अब उन्हें साकार रूप में परिवर्तित करने का अवसर मिला। शिक्षा को प्रगति का एक माध्यम माना जाता था। अतः स्वाभाविक था कि इस क्षेत्र पर उचित ध्यान दिया जाए। उच्च शिक्षा के विकास के लिए विश्वविद्यालय आयोग की संस्तुतियों आ चुकी थी। प्राथमिक शिक्षा के क्षेत्र पर प्रयासरत समीक्षा की गई थी परन्तु माध्यमिक शिक्षा के क्षेत्र में इस प्रकार का गठन नहीं किया गया था। केंद्रीय शिक्षा सलाहकार बोर्ड ने भारत सरकार को सुझाव दिया कि माध्यमिक शिक्षा के पूर्ण गठन की आवश्यकता है। भारत सरकार ने बोर्ड के इस सुझाव को स्वीकार किया तथा 23 सितम्बर 1952 को मद्रास विश्वविद्यालय के उपकुलपति डॉ॰ लक्ष्मणस्वामी मुदालियर की अध्यक्षता में माध्यमिक शिक्षा आयोग की नियुक्ति की। अध्ययन के नाम पर इस आयोग को मुदालियर शिक्षा आयोग भी कहा जाता है।

भारत सरकार ने २३ सितम्बर 1952 को डॉ० लक्ष्मणस्वामी मुदालियर की अध्यक्षता में **माध्यमिक शिक्षा आयोग** की स्थापना की। उन्ही के नाम पर इसे **मुदलियर आयोग** कहा गया। आयोग ने पाठ्यचर्या में विविधता लाने, एक मध्यवर्ती स्तर जोड़ने, त्रिस्तरीय स्नातक पाठ्यक्रम शुरू करने इत्यादि की सिफारिश की।

माध्यमिक शिक्षा आयोग की संस्तुतियाँ-

(१) 4 या 5 वर्ष की प्राइमरी शिक्षा ,

(२) सेकण्डरी शिक्षा के दो भाग होना चाहिए।

(३) वस्तुनिष्ठ (MCQ) परीक्षण-पद्धति को अपनाया जाए।

(४) संख्यात्मक अंक देने के बजाय सांकेतिक अंक दिया जाए।

(५) उच्च तथा उच्चतर माध्यमिक स्तर की शिक्षा के पाठ्यक्रम में एक मूल विषय (core subject) रहे जो अनिवार्य रहे जैसे—गणित, सामान्य ज्ञान, कला, संगीत आदि।

❖ **आयोग की नियुक्ति के निम्नलिखित उद्देश्य थे :-**

1. भारत की तात्कालिन माध्यमिक शिक्षा की स्थिति का अध्ययन करके उस पर प्रकाश डालना।

2. माध्यमिक शिक्षा के उद्देश्य संगठन एवं विषयवस्तु।

3. विभिन्न प्रकार के माध्यमिक विद्यालयों का पारस्परिक संबंध।

4. माध्यमिक शिक्षि का प्राथमिक ,बेसिक तथा उच्च शिक्षा के संबंध में।

5. माध्यमिक शिक्षा से संबंधित अन्य समस्याएँ।

❖ **माध्यमिक शिक्षा की समीक्षा तथा समस्याएं :-**

बहुत ही खेद का विषय है कि स्वतंत्रता के कई दशकों बाद भी माध्यमिक शिक्षा का लगभग वही असंतोषजनक स्थिति है जो अंग्रेजी शासनकाल में थे यद्यपि स्वतंत्रता के तुरंत पश्चात माध्यमिक शिक्षा की समीक्षा के लिए तथा इसे देशवासियों की आकांक्षाओं के अनुरूप बनाने का सुझाव के लिए माध्यमिक शिक्षा आयोग,1952-53 का गठन किया गया आयोग ने सुधार सम्बन्धी बहुत सुझाव दिए। उसके पश्चात 1964 से 1966 के शिक्षा आयोग ने भी सुधार के कई उपाय बताएं। 1968 में शिक्षा नीति बनी और इसके अनुसार 10+2 शिक्षा पद्धति 1975 में आरंभ हुई। 1986 में पुनः शिक्षा के सभी अंगों तथा स्तर की समीक्षा के पश्चात नई राष्ट्रीय शिक्षा नीति 1986 बनी जिसके अनुसार सम्पूर्ण शिक्षा तथा माध्यमिक शिक्षा में कार्य किया जाना है। अवधि एवं ढांचे सम्बन्धी समस्याएं पाठ्यक्रम सम्बन्धी समस्याएं व्यवसायीकरण की समस्याएं शिक्षण विधियों की समस्याएं मूल्यांकन की समस्याएं समानता की समस्याएं पर्यवेक्षण एवं निरीक्षण की समस्याएं गुणात्मक अध्यापक प्रशिक्षण की समस्याएं सामुदायिक सामंजस्य की समस्याएं पाठ पुस्तकों की समस्याएं विस्तार की समस्याएं प्रबंधन तथा नियोजन की समस्याएं वित्तीय समस्याएं माध्यमिक स्कूलों में सुधार के लिए कार्यक्रम स्कूलों को सुधारने के लिए एक दीर्घकालिक राष्ट्रव्यापी कार्यक्रम जिसे प्रगतिक मुल्क स्कूलों की स्थापना से बल एवं प्रोत्साहन मिलेगा की व्यवस्था की जाए यह स्कूल शिक्षा के गुणात्मक सुधार के कार्यक्रम के लिए उत्प्रेरक की भूमिका निभाने की चेष्टा करें व्यक्तिगत रोजगार क्षमता को बढ़ाने कुशल मानव शक्ति की मांग तथा उपलब्धि में असंतुलन को कम करने तथा बिना विशेष रूचि अथवा प्रयोजन के उच्च शिक्षा प्राप्त करने में संलग्न लोगों के लिए एक विकल्प जिताने के लिए शिक्षा का व्यवसायीकरण किया जाए द्वारा सर्वसाधारण के लिए शिक्षा का अधिक सुलभ करण तथा खुली एवं सतत शिक्षा पद्धति के लिए संस्थाओं की स्थापना की जाए अभियान के तर्ज पर माध्यमिक शिक्षा के लिए भी एक नया मिशन शुरू किए जाने पर विचार होना चाहिए माध्यमिक शिक्षा के क्षेत्र में निजी क्षेत्रों की हिस्सेदारी को देखते हुए माध्यमिक शिक्षा के विस्तार में निजी क्षेत्रों की भागीदारी को बढ़ावा देने की संभावना को मान्यता देनी चाहिए सुधार और परीक्षा प्रणाली में की समीक्षा के लिए तत्परता पूर्वक कदम उठाए जाने चाहिए पिक्चर पिछड़े वर्गों अर्थात अनुसूचित जनजातियां जनजातियों शैक्षिक दृष्टि से पिछड़े हुए अल्पसंख्यकों तथा

साड़ी की शारीरिक एवं मानसिक रूप से अक्षम व्यक्तियों की विशिष्ट आवश्यकताओं की पूर्ति द्वारा विषमताओं का निराकरण तथा शैक्षिक स्तर पर समीकरण किया जाए व्यवसायिक शिक्षा को ऐसा रूप दिया जाना चाहिए जिससे कि वह स्थानीय मांग को पूरा कर सके स्थानीय उद्योग व्यापार और व्यवसाय के साथ संपर्क स्थापित किए जाने चाहिएत्र शिक्षक शिक्षा सेवा पूर्वक और सेवा के दौरान प्रशिक्षण स्थापना पुस्तकालय और सूचना तथा संचार प्रौद्योगिकी का बेहतर उपयोग बढ़ाने के लिए निवेश पर मुख्य रूप से जोड़ दिया जाना चाहिए तथा सामाजिक सांस्कृतिक नैतिक मूल्य और भारतीय संविधान प्रतिस्थापित मूल्यों के पोषण के लिए शक्तिशाली साधन बनने के लिए वस्तु तथा प्रक्रिया का अनुष्ठान किया जाए।

❖ **माध्यमिक शिक्षा के प्रसार की नीति :-**

1. माध्यमिक शिक्षा को व्यवसायिक बनाया जाए जिससे निम्न माध्यमिक स्तर 30% और उच्चतर माध्यमिक स्तर पर 50% छात्र व्यवसायिक शिक्षा प्राप्त कर सकें

2. माध्यमिक शिक्षा में अवसरों की समानता पर बल दिया जाए इसके लिए इस स्तर पर अधिकाधिक छात्रवृत्ति प्रदान करने की व्यवस्था की जाए

3. लड़कियों अनुसूचित जातियों एवं जनजातियों में माध्यमिक शिक्षा के विस्तार के लिए विशेष कार्यक्रमों का आयोजन किया जाए

4. प्रतिभा के विकास के लिए वास्तविक रूप से प्रयास किया जाए

5. अगले 20 वर्षों में माध्यमिक शिक्षा की संख्या को नियमित किया जाए इसके लिए माध्यमिक शिक्षा बालियों की स्थापना के लिए उपयुक्त योजनाएं बनाने माध्यमिक शिक्षा के शिक्षण अस्त्रों को ऊंचा उठाने तथा उपयुक्त एवं योग्य छात्रों के चुनाव पर बल दिया जाए

6. प्रत्येक जिले में माध्यमिक शिक्षा के विस्तार के लिए योजनाएं बनाई जाए और उन्हें 10 वर्षों की अवधि में पूर्ण रूप से कार्य किया जाए

7. समस्त नए विद्यालयों द्वारा आवश्यक शिक्षा प्रो को पूर्ण किया जाए और प्रचलित विद्यालयों के स्तर को उच्च बनाया जाए

8. माध्यमिक विद्यालयों के लिए योग छात्र को चुना जाए

9. स्कूलों में विज्ञान शिक्षा को सुदृढ़ किया जाए 10. केंद्रीय सरकार द्वारा माध्यमिक विद्यालय को व्यवसायिक बनाने के लिए राज्य सरकार को विशेष अनुदान दिया जाए

11. बालिकाओं की शिक्षा के विस्तार के लिए अगले 20 वर्षों में महत्वपूर्ण कदम उठाए जाएं

12. बालिकाओं के लिए जहां पर मांग हो पृथक विद्यालयों की स्थापना पर बल दिया जाए और उनको आवास की सुविधा भी दीजाए माध्यमिक शिक्षा के व्यवसायीकरण की आवश्यकता आधुनिक औद्योगिक समाज की आवश्यकता एवं आकांक्षाओं की पूर्ति के लिए तथा भावी नागरिकों को तनु रूप उत्पादकता मुल्क शिक्षा प्रदान करने के लिए शिक्षा का करना केवल आवश्यक है अपितु अनिवार्य हो गया है छात्रों को रोजगार प्राप्त करने उन्हें रोजगार के कार्ड स्थापित करने तथा उचित कौशल निर्माण करने के लिए व्यवसायिक शिक्षा का विशेष योगदान है। देश में बढ़ते हुए पढ़े-लिखे बेरोजगारों की संख्या घटाने का उनकी क्षमता एवं योग्यताओं का उचित उपयोग करने का केवल एक ही मार्ग है वह है शिक्षा का व्यवसायीकरण।

1.1.5.8 कोठारी आयोग-

सन् १९६४ में भारत की केन्द्रीय सरकार ने डॉ दौलतसिंह कोठारी की अध्यक्षता में स्कूली शिक्षा प्रणाली को नया आकार व नयी दिशा देने के उद्देश्य से एक आयोग का गठन किया। इसे **कोठारी आयोग** के नाम से जाना जाता है। डॉ कोठारी उस समय विश्वविद्यालय अनुदान आयोग के अध्यक्ष थे। आयोग ने स्कूली शिक्षा की गहन समीक्षा प्रस्तुत

की जो भारत के शिक्षा के इतिहास में आज भी सर्वाधिक गहन अध्ययन माना जाता है। **कोठारी आयोग** (1964-66) या **राष्ट्रीय शिक्षा आयोग**, भारत का ऐसा पहला शिक्षा आयोग था जिसने अपनी रिपार्ट में सामाजिक बदलावों को ध्यान में रखते हुए कुछ ठोस सुझाव दिए।

आयोग ने २९ जून १९६६ को अपनी रपट प्रस्तुत किया। इसमें कुल २३ संस्तुतियाँ थीं।

सुझाव :-

- समान पाठयक्रम के जरिए बालक-बालिकाओं को **विज्ञान** व गणित की शिक्षा दी जाय। दरअसल, समान पाठयक्रम की अनुशंसा बालिकाओं को समान अवसर प्रदान करती है।
- 25 प्रतिशत माध्यमिक स्कूलों को 'व्यावसायिक स्कूल' में परिवर्तित कर दिया जाए।
- सभी बच्चों को प्राइमरी कक्षाओं में **मातृभाषा** में ही शिक्षा दी जाय। माध्यमिक स्तर (सेकेण्डरी लेवेल) पर स्थानीय भाषाओं में शिक्षण को प्रोत्साहन दिया जाय।
- 1 से 3 वर्ष की पूर्व प्राथमिक शिक्षा दी जाए
- 6 वर्ष पूरे होने पर ही पहली कक्षा में नामांकन किया जाए
- पहली सार्वजनिक परीक्षा 10 वर्ष की विद्यालय शिक्षा पूरी करने के बाद ही हो
- विषय विभाजन कक्षा नौ के बदले कक्षा 10 के बाद हो
- उच्च शिक्षा में 3 या उससे अधिक वर्ष का स्नातक पाठ्यक्रम हो और उसके बाद विविध अवधि के पाठ्यक्रम हों।
- माध्यमिक विद्यालय दो प्रकार के होंगे, उच्च विद्यालय और उच्चतर विद्यालय।
- कॉमन स्कूल सिस्टम लागू किया जाए तथा स्नातकोत्तर तक की शिक्षा मातृभाषा में दी जाए
- शिक्षक की आर्थिक, सामाजिक व व्ययसायिक स्थिति सुधारने की सिफारिश की।

1.1.5.9 राष्ट्रीय शिक्षा नीति (1968)-

24 जुलाई 1968 को भारत की प्रथम राष्ट्रीय शिक्षा नीति घोषित की गई। यह पूर्ण रूप से कोठारी आयोग के प्रतिवेदन पर आधारित थी। सामाजिक दक्षता, राष्ट्रीय एकता एवं समाजवादी समाज की स्थापना करने का लक्ष्य निर्धारित किया गया। इसमें शिक्षा प्रणाली का रूपान्तरण कर 10+2+3 पद्धति का विकास, हिन्दी का सम्पर्क भाषा के रूप में विकास, शिक्षा के अवसरों की समानता का प्रयास, विज्ञान व तकनीकी शिक्षा पर बल तथा नैतिक व सामाजिक मूल्यों के विकास पर जोर दिया गया।

1.1.5 शिक्षा के क्षेत्र में स्वयंसेवी संस्थाओं का योगदान -

किसी भी प्रजातांत्रिक समाज में मुख्यतः तीन घटक होते हैं-

(1) सरकार

(2) व्यावसायिक सेक्टर

(3) नागरिक समाज

ये तीनों एक-दूसरे से सम्बन्धित रहते हैं। सरकार मुख्य रूप से सच का केंद्र होती है। उसके पास नियंत्रण और शासन करने की शक्ति होती है। इसी प्रकार व्यावसायिक सेक्टर लाभ केंद्रित होते हैं। वे किसी भी कीमत पर पर्यावरण, स्वास्थ्य या जन कल्याण के बजाय केवल स्वयं लाभ उठाने की कोशिश करते हैं। नागरिक समाज को इस दशा में

सरकार और व्यावसायिक सेक्टर दोनों को ही नियंत्रित करना पड़ता है और इस प्रकार जनता का पक्ष लेते हुए उनके अधिकारों और हितों की रक्षा करती है।

प्रजातांत्रिक शासन की स्थापना में लोगों को अपने अधिकारों के प्रति जागरूक करते हुए उन्हें संगठन बनाने और विचार व्यक्त करने की स्वतंत्रता थी। इस तरह से लोग लोगों ने विभिन्न उद्देश्यों को ध्यान में रखते हुए जैसे कि स्त्री अधिकारी की रक्षा के लिए, पर्यावरण संरक्षण, स्वास्थ्य सेवाओं के लिए जन संगठनों का निर्माण करना प्रारंभ कर दिया, शिक्षा के क्षेत्र में भी इन संगठनों ने कार्य किया और अशिक्षा को कम करने का प्रयास किया। इन संगठनों को ही हम स्वयंसेवी संगठन कह सकते हैं। ये संगठन समाज का ही हिस्सा होते हैं, जो समाज की उस आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए प्रयास करते हैं जिनकी तरफ सरकार का ध्यान नहीं जाता है या कम जाता है या संसाधनों की कमी के कारण ध्यान नहीं दिया जाता या अन्य कार्यों को प्राथमिकता प्रदान करने के कारण वह कार्य उपेक्षित रह जाता है।

1.1.6.1 स्वयंसेवी संगठन का अर्थ-

स्वयंसेवी संगठन से तात्पर्य लोगों के ऐसे समूह से हैं जिनका मुख्य उद्देश्य अपने समाज या समुदाय की आवश्यकताओं को पूरा करना है। ये संगठन सरकार द्वारा तो ना बनाए जाते हैं न ही नियंत्रित किए जाते हैं। ये संगठन अपने समुदाय की ऐसी जरूरतों को पूरा करते हैं जिसकी ओर सरकार ध्यान नहीं देती या फिर संसाधनों की अनुपलब्धता या अन्य प्राथमिकताओं के कारण इन समस्याओं की ओर ध्यान नहीं दे पाते हैं।

इस प्रकार स्वयंसेवी संगठनों का सम्बन्ध मुख्य रूप से सामाजिक न्याय, विकास और मानवाधिकारों से है। यह अपने स्थानीय समुदायों को सीधे सेवा उपलब्ध कराते हैं। स्वयंसेवी संगठनों की मुख्य विशेषता यह है कि यह अपने लक्ष्यों को पूरा करने के लिए जरूरी साधनों के लिए अनुदान पर निर्भर रहते हैं। उन्हें ये अनुदान समुदाय से व्यापारिक प्रतिष्ठानों से या फिर देसी विदेशी/विदेशी सरकार या अंतरराष्ट्रीय संगठनों से मिलती है।

प्राकृतिक आपदाओं जैसे बाढ़, सूखा, भूकम्प, भूस्खलन के बाद इन लोगों के पुनर्वास और राहत कार्यों में इन स्वयंसेवी संगठनों के कार्य सराहनीय है। स्थानीय संगठन तक पहुँचते हैं और आपदा पीड़ित लोगों के लिए राहत कार्य करते हैं। ये संगठन पीड़ितों के लिए फंड इकट्ठा करते हैं उन्हें भोजन, कपड़ा और स्वास्थ्य सेवाएँ प्रदान करते हैं। ये संगठन समुदाय के पुनर्वास कार्यों में भी मदद करते हैं। इसके लिए उन्हें सरकार या व्यक्तिगत प्रतिष्ठानों से भी सहायता मिलती है। इस प्रकार से ये स्वयंसेवी संगठन राहत कार्यों में विशेष रूप से शिक्षा, स्वास्थ्य, सामुदायिक विकास और पर्यावरण के क्षेत्र में सेवाएँ उपलब्ध कराते हैं।

स्वयंसेवी संगठन व्यक्तियों का ऐसा संगठन होता है जो कि कतिपय सामाजिक सिद्धांतों में विश्वास करता है एवं इस प्रकार कार्य करता है वह जिस समुदाय की सेवा कर रहा है उसका विकास कर सके।

- स्वयंसेवी संगठन ऐसे सामाजिक विकास संगठन है, जो व्यक्ति के शक्तिकरण में सहायता करते हैं।
- ये ऐसे संगठन अथवा व्यक्तियों का समूह है जो किसी वाह्य नियंत्रण से मुक्त रहते हुए अपने विशिष्ट उद्देश्य व लक्ष्यों को ध्यान में रखते हुए कार्य करते हैं ताकि किसी समुदाय या स्थान या स्थिति में वांछित परिवर्तन लाए जा सकें।
- स्वयंसेवी संगठन ऐसे संगठन है जो राजनीतिक दलों से सम्बद्ध नहीं होते एवं सामान्य तौर पर समुदाय के विकास एवं लाभप्रद कार्यों में संगठन रहते हैं।
- स्वयंसेवी संगठन वे संकल्प संगठन है जो शहरी व ग्रामीण क्षेत्र के विशेष रूप से गरीबों, दलितों व पिछड़ों की बुनियादी समस्याओं को दूर कर उनके जीवन स्तर को सुधारने के लिए प्रयासरत हैं।
- समुदाय के द्वारा समुदाय के लिए स्थापित ऐसे संगठन जो कि बिना अथवा अत्यल्प सरकारी हस्तक्षेप के सिर्फ दानदाता के अतिरिक्त सामाजिक-आर्थिक सांस्कृतिक गतिविधियां करती है स्वयंसेवी संगठन कहलाते हैं।
- ऐसा संगठन जो कि लचीला प्रजातांत्रिक संगठन है और जो बिना स्वयं के लाभ के लोगों की सेवा में रत रहता हो।

यदि हम इतिहास में झाँकने का प्रयास करें तो पाएंगे कि समय-समय पर स्वयंसेवी संगठनों ने मानवता की सेवा के लिए कई सारे महत्वपूर्ण कार्य किए हैं। प्राकृतिक आपदाओं जैसे भूकम्प, सूखा, तूफान इत्यादि एवं अन्य मानवीय सेव कृत्यों जैसे- जन शिक्षा, जन-स्वास्थ्य, पर्यावरण संरक्षण, जनसंख्या नियंत्रण इत्यादि में इन संगठनों में कारगर भूमिका निभायी है।

1.1.6.2 स्वयंसेवी संगठन एवं शिक्षा-

स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात शिक्षा के महत्व को स्वीकारते हुए संविधान में अनुच्छेद 45 का प्रावधान किया गया, जिसमें 1960 तक 6 से 14 वर्ष के सभी बच्चों को अगले 10 वर्षों में प्राथमिक शिक्षा से आच्छादित करने का लक्ष्य रखा गया। स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात हमारे देश के सामने अनेक समस्याएँ थी, जिसमें शिक्षा का गिरा हुआ स्तर एक प्रमुख समस्या थी अन्य समस्याएँ जैसे-गरीबी, स्त्रियों की निम्न स्थिति, बढ़ती हुई जनसंख्या इत्यादि इसी की समस्या से जुड़ी हुई समस्या थी। सरकार ने इन समस्याओं को हल करने के लिए अनेक नई योजनाएँ बनाई।

स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद अशिक्षा को दूर करना भारत सरकार के सामने सबसे बड़ा राष्ट्रीय मुद्दा था। शिक्षा के स्तर को उठाना और शिक्षा दर में सुधार करने के लिए सरकार ने कई योजनाएँ बनाई और कमीशन बिठाई जिन्होंने तत्कालीन शिक्षा व्यवस्था में व्याप्त कमियों पर प्रकाश डाला और इन कमियों को दूर करने के लिए सुझाव दिए। इन सुझावों को कार्यान्वित किया गया और अनेक नई योजनाएं बनाई गई। इन सब प्रयासों के परिणामस्वरूप शिक्षा दर जो कि 1951 में 18.37% से बढ़कर 1961 में 24.02% हो गई। हालांकि ये वर्ष वृद्धि संतोषजनक नहीं थी। कोठारी कमीशन (1964-66) में फिर से शिक्षा व्यवस्था का विश्लेषण किया और शिक्षा का अधिक से अधिक प्रचार व प्रसार करने पर जोर दिया। सर्वप्रथम यह सुझाव दिया शिक्षा प्रदान करने हेतु राज्य व जिला स्तर पर स्वयंसेवी संगठनों का सक्रिय सहयोग लिया जाए।

राष्ट्रीय शिक्षा नीति में (1986) अशिक्षा को दूर करने के लिए प्रारंभिक शिक्षा के सार्वभौमीकरण पर बल दिया गया। शिक्षा के सार्वभौमीकरण का अर्थ है जन-जन को शिक्षित करना। भारतीय संविधान के अनुच्छेद 45 में प्रत्येक राज्य को उत्तरदायित्व सौंपते हुए ये उल्लेख किया गया था कि वे जन-जन को शिक्षित बनाने के लिए प्रारम्भिक शिक्षा की अनिवार्य व्यवस्था करेंगे। उक्त संवैधानिक निर्देश के अनुपालन हेतु 2 अक्टूबर 1951 से ही शिक्षा के सार्वजनीकरण की दिशा में निन्तर प्रयास किए जा रहे हैं किन्तु आज भी हम लक्ष्य को प्राप्त कर पाने में असमर्थ रहे हैं।

यह एक तथ्य है कि देश की इतनी बड़ी जनसंख्या को केवल स्कूल के माध्यम से शिक्षित नहीं किया जा सकता। लोगों को शिक्षित करने के लिए अनौपचारिक शिक्षा को प्रोत्साहन दिया जाना चाहिए, जैसा कि राष्ट्रीय शिक्षा नीति (1986) में कहा गया है। अनौपचारिक शिक्षा के लिए स्वयंसेवी संगठन ज्यादा सफल साबित हुए हैं। इन संगठनों ने यह दिखा दिया है कि वे शिक्षा के सार्वभौमीकरण में विशेष रुप से अनौपचारिक शिक्षा के माध्यम से कहीं अधिक प्रभावकारी व कारगर साबित हुए हैं।

1.1.6.3 कुछ महत्वपूर्ण स्वयंसेवी संगठन-

स्वयंसेवी संगठनों ने जन केंद्रित योजनाओं जैसे-स्वास्थ्य सेवाओं, परिवार नियोजन, पर्यावरण संरक्षण और अनौपचारिक शिक्षा के विकास में सराहनीय कार्य किए हैं। प्रजातंत्र में स्वयंसेवी संगठनों को अवसर प्रदान किए जाते हैं। भारत में भी स्वयंसेवी संगठनों ने अपने सेवा कार्यों से लोगों की सेवा की है। जन शिक्षा के क्षेत्र में स्वयंसेवी संगठनों का योगदान काफी सराहनीय रहा है।

1.1.6.3.1 आकाँक्षा

आकाँक्षा फाउंडेशन एक ऐसा संगठन है जिसका ये दृष्टिकोण है कि वह एक दिन समस्त छात्रों को सशक्त जीवन के लिए आवश्यक शिक्षा, कौशलों व चारित्रिगुणों से लैस कर देगा। आकाँक्षा प्रमुख रूप से शिक्षा के क्षेत्र में कार्य कर रहा है। जहाँ यह आकाँक्षा केन्द्रों के माध्यम से अनौपचारिक शिक्षा प्रदान कर रहा है वहीं आकाँक्षा स्कूलों के माध्यम से औपचारिक शिक्षा। पिछले 20 वर्षों के दौरान यह संगठन एक केन्द्र के 75 बच्चों से बढ़कर 58 केन्द्रों व 6 स्कूलों के 3500 बच्चों तक पहुँच गया है। यह संगठन प्रत्येक छात्र/छात्रा को मजबूत शैक्षिक आधार एक अच्छा समय स्वाभिमान

और मूल्य प्रदान करने एवं उन्हें इस लायक बनाने ताकि वह अपनी जीविका स्वयं कमाकर अपने जीवन स्तर को सुधार सकें, के लिए दृढ़ संकल्पित है।

आकाँक्षा प्रत्येक बच्चे को निम्नलिखित सुविधायें उपलब्ध कराने के लिए कटिबद्ध है-

1. अंग्रेजी व गणित में एक मजबूत बुनियादी आधार
2. स्वाभिमान व मूल्यों का अहसास
3. एक अच्छा समय जहाँ हँसते-खेलते सीखे, कक्षा में एवं बाहर भी
4. ऐसे उपाय जिससे वे भविष्य में अपनी जीविका अर्जित कर सकें

1.1.6.3.2 वनश्री ट्रस्ट

समस्त जीवधारी इससे पूर्व में कभी न पाए गए ह्रास की ओर लगातार अग्रसारित वातावरण से गुजर रहे हैं। हम सब अपने जीवन के लिए वातावरण पर निर्भर हैं परन्तु इसके प्रति बिल्कुल भी ध्यान नहीं देते। प्रत्येक व्यक्ति प्रकृति की देखभाल करें, इस उद्देश्य के साथ वनश्री ट्रस्ट 2001 में बना।

वनश्री ट्रस्ट संवेदनशील उत्साही युवाओं का समूह है जो कि बेहतर व हरी-भरी धरती के निर्माण के लिए लगन से कार्य करना चाहते हैं। हम मुख्य रूप से इस प्रकार की गतिविधियों में संलग्न है जिसके माध्यम से बच्चे व युवा वर्ग संस्कृति का संरक्षण करना सीख सके ताकि हमारे आसपास वातावरण को जो नुकसान पहुँचाया जा रहा है उसे कुछ कम किया जा सके। विद्यालय वन योजना के अन्तर्गत प्रत्येक विद्यालय के पास अपने परिसर में एक छोटा सा वन होना चाहिए।

1.1.6.3.3 पोथमकंदम् विद्यालय

यह विद्यालय 1955 में प्रारंभ किया गया था जिसे 1984 में उच्च प्राथमिक विद्यालय के रूप में स्वीकृत कर दिया गया। यह विद्यालय केरल राज्य सरकार द्वारा घटनानुसार ब्लॉक पंचायत (स्थानीय स्वशासन) द्वारा संचालित होता है। इसमें पढ़ने वाले बच्चे ज्यादातर गरीब किसानों और कुली इत्यादि का कार्य करने वाले श्रमिकों के हैं। विद्यालय का अपना 'शिक्षक' अभिभावक संघ है जिससे मिलने वाले अनुदान से बच्चों को दोपहर का भोजन प्रदान किया जाता है संस्था की ओर से विभिन्न स्वयंसेवी संस्थाओं से अनुरोध किया जाता है कि वह विद्यालय में किसी एक जरूरत को पूरा करने का उत्तरदायित्व ले अर्थात पीने के पानी की व्यवस्था, फर्नीचर नवीन शिक्षण सामग्री, कंप्यूटर इत्यादि। विद्यालय में कक्षायें नहीं होती परन्तु ग्रेड प्रदान किए जाते हैं।

बच्चों को अच्छी गुणवत्ता पूर्ण शिक्षा उपलब्ध कराना तथा उन्हें औपचारिक शिक्षा व्यवस्था से जोड़ना। इस विद्यालय में ग्रामीण क्षेत्र के बच्चों पर अधिक ध्यान केन्द्रित किया जाता है।

1.1.6.3.4 अजीम प्रेमजी फाउंडेशन

प्रसिद्ध उद्योगपति एवं विप्रो के अध्ययन अजीम प्रेमजी ने अपनी इस संस्था के माध्यम से बंगलुम के 'लर्निंग गारंटी योजना' प्रारम्भ की। यह योजना 23 नवम्बर को गुलबर्गा (कर्नाटक) में प्रारम्भ की गयी थी। इस योजना में उत्तरवर्ती कर्नाटक के 7 जिलों के लगभग 9500 विद्यालयों को चुना गया था। इसी फाउंडेशन ने 2011 में बंगलुम ने एक निजी विश्वविद्यालय की भी स्थापना की है जो शिक्षा के क्षेत्र में गुणवत्ता लाने के लिए प्रयासरत होगा।

1.1.6.3.5 प्रथम्

प्रायः स्वयंसेवी संस्थायें किसी एक व्यक्ति या छोटे समूह के द्वारा स्थापित होती है। 'प्रथम्' शायद पहली संस्था है जो मुंबई के म्यूनिसिपल कमिश्नर तथा कई देशों के गणमान्य व्यक्तियों द्वारा निर्मित पब्लिक चैरिटेबल ट्रस्ट है। इसकी स्थापना 1994 ईस्वी में की गई थी। अपने प्रारम्भिक वर्षों में प्रथम् ने मुम्बई शहर की मलिन बस्तियों में पूर्व-विद्यालय शिक्षा देनी प्रारम्भ की थी। इस कार्य हेतु उन्होंने कोई पूर्व निर्धारित स्थान नहीं चुना अपितु कहीं भी घर में, मंदिर में, दफ्तरों में जो स्थान मिला वहीं पर बच्चों को एकत्रित करके शिक्षा देनी प्रारम्भ की। इस कार्य हेतु कार्यकर्ताओं को चुना

एवं प्रशिक्षित किया गया। देखते ही देखते प्रथम बालक/लड़कियों की संख्या बढ़ती चली गई बाद में पूर्व विद्यालय शिक्षा के साथ-साथ विद्यालय जाने वाले सभी बच्चे तथा वे बच्चे जो शैक्षिक रूप से पिछड़े रहते थे तथा ड्रॉप आउट हो सकते थे उन्हें भी इस योजना में सम्मिलित किया गया इन बच्चों के माता-पिता प्रायश्चित है अतः उन्हें भी शिक्षित करने के लिए बालसखी कार्यक्रम प्रारंभ किया गया इन विद्यालयों का उद्देश्य बच्चों को शिक्षा की मुख्यधारा औपचारिक शिक्षा में शामिल करना था

इसी प्रकार दीनदयाल शोध संस्थान भी एक स्वयंसेवी संस्था (ग्रामीण विकास संस्था) है। इसकी स्थापना नानाजी देशमुख द्वारा की गई थी। इसका मुख्यालय दिल्ली में है। इसका मुख्य उद्देश्य दीनदयाल उपाध्याय के विचारों को फलीभूत करना है। नानाजी ने 62 वर्ष की आयु में 54 एकड़ क्षेत्रफल का एक विशाल परिसर बनाया। जयप्रकाश नारायण और उनकी पत्नी प्रभावती देवी के नाम पर इसका नामकरण किया - 'जयप्रभा ग्राम' 'हर खेत को पानी, हर हाथ को काम' का नारा देकर उन्होंने ग्रामीण जीवन के सर्वांगीण विकास के लिए चार सूत्र निर्धारित किए – स्वावलम्बन, शिक्षा,स्वास्थ्य एवं समरसता। रचनात्मक कार्य की दिशा में अग्रसर होते हुए नानाजी ने चित्रकूट में 'ग्रामोदय' योजना विकसित की ताकि आरम्भिक से एम.ए. तक की शिक्षा प्रपट युवजन शहरों की ओर भागने की बजाय ग्रॅमी जीवन अपनाने की दिशा में प्रवृत्त हों। चित्रकूट में आरोग्यधाम, उद्यमिता विद्यापीठ, गौपालन, वनवासी छात्रावास, गुरुकुल आदि की शृंखला ही खड़ी कर दी।

1.2 समस्या का प्रादुर्भाव-

प्रत्येक शोध कार्य का महत्वपूर्ण चरण समस्या का चयन होता है, यह समस्या चाहे समाज की तात्कालिक आवश्यकता से सम्बन्धित हो अथवा व्यक्तिगत उत्सुकता से, शिक्षा प्रक्रिया में परस्पर सहयोग की भावना का महत्वपूर्ण स्थान है। प्रत्येक समाज अपनी उन्नति के लिए समस्त सदस्यों को शिक्षित करता है, जिससे सम्पूर्ण राष्ट्र शिक्षित होकर उन्नत एवं विकास के मार्ग पर अग्रसर होता है। विभिन्न ग्रंथों के अवलोकन से यह ज्ञात होता है, कि प्रत्येक ऋषि, मुनि, विद्वान एवं मनीषगण अपने विचारों व शाश्वत आदृश्य शक्तियों से समाज को लाभान्वित करने हेतु शिक्षा को ही माध्यम बनाते हैं। शिक्षा भावों को प्रदान करने का साधन है।

हमारे समाज में शिक्षा के क्षेत्र में सामाजिक संगठनों, मिशनों, सांस्कृतियों का बहुत बड़ा योगदान रहा है। राष्ट्रऋषि नानाजी देशमुख द्वारा स्थापित 'दीनदयाल शोध संस्थान' तथा इससे सम्बद्ध अन्य प्रकल्प शिक्षा के क्षेत्र में अपना योगदान देते रहे हैं और वर्तमान में ही दे रहे हैं। राष्ट्रऋषि नानाजी देशमुख जी जो 'दीनदयाल शोध संस्थान' के संस्थापक हैं इनके व्यक्तित्व में से मैं हमेशा प्रभावित रहा हूँ और मेरे मन में विचार आया है कि उनके विचारों को आत्मसात कर सकूँ साथ ही इस संस्थान द्वारा संचालित शैक्षिक तथा अन्य क्रिया-कलापों, शैक्षिक प्रयासों का अवलोकन करके भविष्य में उसमें सुधार हेतु कुछ आवश्यक सुझाव दिए जा सके।

शोधकर्ता द्वारा **'दीनदयाल शोध संस्थान का शैक्षिक योगदान'** अध्ययन विषय चुनने का कारण था कि संस्थान के सभी पक्षों शिक्षा के उद्देश्य पाठ्यक्रम शिक्षक छात्र संबंध कर्तव्य अनुशासन का अध्ययन का वर्तमान शिक्षा प्रणाली में दौड़ते हुए वर्तमान शिक्षा के स्तर को सुधारना है।

1.3 समस्या कथन-

अनुसंधान में समस्या कथन का महत्वपूर्ण स्थान है इस महत्व को स्पष्ट करते हुए सी०बी०गुड एवं स्केट्स (1954) ने कहा है कि "नियमानुसार किसी अनुसंधान कार्य का शीर्षक केवल उस अनुसंधान के विषय अथवा उस अनुसंधान में प्रस्तुत किए गए विशिष्ट क्षेत्र को नाम प्रदान करता है।"

समस्या कथन का सीधा अर्थ है कि अनुसंधान क्षेत्र कि सीमा निर्धारित किया जाए अर्थात अनुसंधान के विस्तृत क्षेत्र को सीमाबद्ध करने मे समस्या कथन का महत्व रहता है। यह आवश्यक इसलिए भी है कि अनुसंधानकर्ता को स्पष्टतः मालूम हो कि उसे क्या करना है एवं किन प्रश्नों का हल खोजना है। संक्षेप में समस्या कथन अधोलिखित है-

"दीनदयाल शोध संस्थान का शैक्षिक योगदान"

1.4 अध्ययन का औचित्य-

दीनदयाल शोध संस्थान पर अनुसंधान किए जाने का औचित्य यह है कि दीनदयाल शोध संस्थान पर जो भी साहित्य लिखा गया है वह हमें जानकारी साहित्य के माध्यम से दीनदयाल शोध संस्थान से सम्बन्धित उनके संस्थापक के जीवनकाल, उनके जन्म, उनका जीवन, उनका जीवन घटना चक्र, उनका कार्य, उनकी उपलब्धियाँ समाज में उनका योगदान और उनकी जीवन गतिविधियों एवं विचारधारा को जानना और प्रकाश में लाना ये मेरे चयनित विषय का औचित्य है।

1.5 समस्या में निहित शब्दों की व्याख्या-

1.5.1 दीनदयाल शोध संस्थान :

पंडित दीनदयाल उपाध्याय की संकल्पना **एकात्म मानववाद** को मूर्त रूप देने के लिये नानाजी देशमुख ने १९७२ में दीनदयाल शोध संस्थान की स्थापना की। इसका मुख्यालय दिल्ली में है। इसका मुख्य उद्देश्य दीनदयाल उपाध्याय के विचारों को फलीभूत करना है।

1.5.2 शैक्षिक :

शब्दकोश के अनुसार-

- शिक्षा देने वाला या जिससे शिक्षा मिले
- शिक्षा का या शिक्षा से सम्बन्धित
- शिक्षा सम्बन्धित
- शिक्षा का एजुकेशनल वह जो शिक्षा वेदांग का ज्ञाता या पंडित हो।
- वह जो आधुनिक शिक्षा विज्ञान का पंडित हो-एजुकेशनिष्ट

प्रस्तुत लघु शोध में शैक्षिक से तात्पर्य औपचारिक एवं निरौपचारिक शिक्षा के क्षेत्र में चल रही विभिन्न गतिविधियों से है।

1.5.3 योगदान :

शब्दकोश के अनुसार-

- सहयोग करना
- हाथ बँटाना
- योग दीक्षा

प्रस्तुत लघु शोध में योगदान से तात्पर्य शिक्षा के क्षेत्र में किए जा रहे धरातलीय/व्यावहारिक प्रयासो से है।

1.6 अध्ययन के उद्देश्य-

- शिक्षा के क्षेत्र में दीनदयाल शोध संस्थान के योगदान का अध्ययन करना।
- दीनदयाल शोध संस्थान के शैक्षिक विचारों का अध्ययन करना।
- दीनदयाल शोध संस्थान की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि का अध्ययन करना।
- दीनदयाल शोध संस्थान के शैक्षिक प्रकल्प का अध्ययन करना।

- परमानन्द आश्रम पद्धति विद्यालय की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि का अध्ययन करना।
- परमानन्द आश्रम पद्धति विद्यालय गनीवां केन्द्र की दिनचर्या का अध्ययन करना।
- परमानन्द आश्रम पद्धति विद्यालय गनीवां केन्द्र में शिक्षा सुविधाओं का अध्ययन करना।
- प्रस्तुत अध्ययन की शैक्षिक उपादेयता चिन्हित करना।
- अध्ययन के आधार पर शैक्षिक उन्नयन एवं नवाचार हेतु सुझाव प्रस्तुत करना।

1.7 अध्ययन का परिसीमांकन-

प्रत्येक शोध की एक सीमा होती है, उसी सीमा तक उसके निष्कर्ष वैध होते हैं। प्रस्तुत शोध की निम्न सीमाएं हैं-

- प्रस्तुत शोध दीनदयाल शोध संस्थान के विचार एवं शैक्षिक योगदान के अध्ययन तक सीमित है।
- प्रस्तुत शोध दीनदयाल शोध संस्थान चित्रकूट केन्द्र में परमानन्द आश्रम पद्धति विद्यालय, गनीवां के अध्ययन तक ही सीमित है।

1.8 अध्ययन विधि-

प्रस्तुत समस्या का सावधानीपूर्वक अध्ययन एवं विश्लेषण तथा सम्बन्धित साहित्य का अवलोकन करने के बाद अनुसंधानकर्ता ने यह निष्कर्ष निकाला कि इस अध्ययन के लिए वैयक्तिक अध्ययन विधि उपयुक्त है।

वैयक्तिक अध्ययन

सामाजिक अनुसंधान में वैयक्तिक अध्ययन ऑकड़े एकत्रित करने की सर्वाधिक प्राचीन विधि है। वैयक्तिक अध्ययन को वैयक्तिक विषय अध्ययन अथवा एकल-विषय अध्ययन भी कहा जाता है। यह किसी इकाई के गहन एवं विस्तृत अध्ययन करने तथा उस इकाई के बारे में सम्पूर्ण गुणात्मक ऑकड़े एकत्रित करने की महत्त्वपूर्ण प्रविधि मानी जाती है। वैयक्तिक अध्ययन सामाजिक अनुसंधानकर्ता को तीव्र एवं सूक्ष्म अन्तर्दृष्टि प्रदान करके इकाई का गहन अथवा विस्तृत अध्ययन करने में सहायता प्रदान करता है। इसके द्वारा समस्याओं का मनो-सामाजिक अध्ययन करके उनके निदान एवं समाधान के उपायों का भी पता लगाया जा सकता है।

वैयक्तिक अध्ययन का अर्थ कई बार किसी व्यक्ति के व्यक्तिगत जीवन के अध्ययन से ही लगाया जाता है लेकिन वस्तुतः यह किसी भी सामाजिक इकाई, चाहे वह व्यक्ति हो या परिवार, समिति, संस्था, समूह अथवा सम्पूर्ण समुदाय का विस्तृत एवं गहन अध्ययन है।

एकल विषय अध्ययन पद्धति सम्पूर्ण परिस्थिति अथवा कारकों के सम्मिलित रूप, प्रक्रिया के विवरण और घटनाओं के अनुक्रम जिसमें व्यवहार घटित होते हैं, मानव व्यवहार का सम्पूर्ण संरचना में अध्ययन तथा प्राक्कल्पनाओं के निर्माण में सहायक वैयक्तिक स्थितियों के विश्लेषण एवं तुलना पर बल देती है।

तत्कालीन घटना की स्वयं में, जीवन सन्दर्भ की सीमा में अन्वेषण करती है. जब घटना और सन्दर्भ के बीच की सीमाएँ स्पष्ट न हो और जिसमें साक्ष्य के अनेक स्त्रोतों का प्रयोग किया जाता है।

पी.वी. यंग ने लिखा है कि अनुसंधान के अन्तर्गत वैयक्तिक अध्ययन का विषय केवल एक मानव प्राणी हो सकता है या उसके जीवन की एक घटना, अथवा विचारपूर्ण रूप से, राज्य या सामाज्य या इतिहास का एक युग हो सकता है।

यिन के अनुसार वैयक्तिक अध्ययन एक आनुभविक जांच है, जो कि एक समुदाय के एकल विषय अध्ययन से तात्पर्य है, समुदाय के पूर्ण जीवन के बारे में अन्तर्दृष्टि प्राप्त करने के लिये अध्ययनकर्ता द्वारा पर्याप्त जानकारी व्यवस्थित

रूप से एकत्रित करना। वैयक्तिक अध्ययन में सामाजिक इकाई के बारे में सम्पूर्ण जानकारी प्राप्त करने का प्रयास किया जाता है। इसके लिये अनेक उपलब्ध प्रविधियों का प्रयोग किया जाता है साथ ही इकाई के बारे में सभी स्त्रोतों से उपलब्ध सूचना एकत्रित करने का प्रयास किया जाता है।

1.9 शोध उपकरण-

प्रत्येक और सभी प्रकार के अध्ययन के लिए हमें निश्चित प्रकार के शोध उपकरणों की आवश्यकता होती है, जो नये क्षेत्रों के वास्तविक तथ्यों को एकत्र करने में सक्षम होते हैं। इन उपकरणों को उसी प्रकार टूल्स' कहा जाता हैं, जिस प्रकार श्रमिक अपने उपकरणों को 'टूल्स' कहकर पुकारता हैं। शैक्षिक अध्ययनों में विभिन्न प्रकार के उपकरणों का प्रयोग किया जाता है। विभिन्न प्रकार के शोध उपकरणों का उपयोग आंकड़ो को एकत्र कर उन्हें परिभाषित करने के लिए किया जाता है ।

प्रत्येक उपकरण आंकड़ों को एकत्र करने के लिए एक निश्चित माध्यम होता है। सफल अध्ययन के लिए यह आवश्यक है कि उपयुक्त शोध उपकरण का चयन किया जाये। विभिन्न उददेश्यों की पूर्ति के लिए विभिन्न प्रकार की सूचनाएं एकत्र करने के लिए अनेक प्रकार के उपकरण प्रयुक्त होते हैं। एक या अधिक उपकरणों का प्रयोग शोधार्थियों द्वारा अपने उद्देश्य के लिए किया जा सकता है प्रस्तुत शोध में शोधार्थी ने ऑकड़े एकत्र करने के लिए **साक्षात्कार** एवं **अवलोकन** को मुख्य उपकरण के रूप में प्रयोग किया है।

1.9.1 साक्षात्कार-

शोष उपकरण के रूप में साक्षानगर प्रश्नावली का दूसरा रूप है। इसको व्यापक ढंग से परिभाषित करते हुए मूर ने लिखा है कि- "किसी उद्देश्य से किया जाने वाला वार्तालाप ही साक्षात्कार है।"

कैमेल तथा कोहेन" के अनुसार- "यह दो व्यक्तियों के मध्य किया जाने वाला ऐसा वार्तालाप है जो साक्षात्कारको प्रारम्भ करता है और जिसके माध्यम से वह अनुसंधान सम्बन्धी प्रासंगिक सूचनाओं को संकलित करता है।"

जान डब्ल्यू बेस्ट के शब्दों में- साक्षात्कार एक प्रकार से मौखिक प्रकार की प्रश्नावली है। इसके अन्तर्गत उत्तर लिखने के स्थान पर आमने-सामने की स्थिति में विषयी मौखिक उत्तर देता है।

वास्तव में व्यवहारपरक विज्ञानों में सादात्कार से तात्पर्य अनुसंधान की एक प्रविधि से है । अतीत में साक्षात्कार का प्रयोग निदान, उपचार व चयन आदि के लिए किया जाता रहा है परन्तु आधुनिक वैज्ञानिक युग में इसका उपयोग अनुसंधान की एक वैज्ञानिक प्रविधि के रूप में किया जाने लगा है। वैज्ञानिक स्तर पर इसका उपयोग सम्भवत. प्रथम महायुद्ध में अल्फा बुद्धि परीक्षाण" में किया गया था इसका अंग्रेजी रूपान्तर (Initervicw) है जो कि दो शब्दों Inter+View से मिलकर बना है। इण्टर (Inter) का अर्थ है- आन्तरिक तथा View का अर्थ है- निरीक्षण। इस प्रकार साक्षात्कार का एक सम्मिलित शाब्दिक अर्थ है आन्तरिक निरीक्षण।

मैक्कोवी तथा गैक्कोवी" के शब्दों में- "साक्षात्कार से अभिप्राय एक ऐसी स्थिति से है जिसमें एक व्यक्ति साक्षात्कारकर्ता, आमने-सामने के पारस्परिक मौखिक आदान-प्रदान से दूसरे व्यक्ति अथवा व्यक्तियों को सूचना देने अथवा अपने विचार तथा विश्वास व्यक्त करने के लिए प्रेरित करने का प्रयास करता है।"

करलिंगर" के अनुसार- "साक्षात्कार अन्तर व्यक्तिगत भूमिका की ऐसी स्थिति है, जिसमें एक व्यक्ति साक्षात्कारकर्ता, एक दूसरे व्यक्ति जिसका साक्षात्कार किया जा रहा है, अथवा उत्तरदाता से उन प्रश्नों के उत्तर प्राप्त करना चाहता है जिसकी रचना सम्बन्धित अनुसंधान समस्या के लक्ष्यों की पूर्ति के लिए की गई है।

इस प्रकार यह स्पष्ट होता है कि साक्षात्कार आधुनिक वैज्ञानिक युग में एक साधारण प्रक्रिया नहीं है बल्कि अब इसने एक अविकसित कला तथा अध्ययन की वैज्ञानिक महति का रूप धारण कर लिया है। अब साक्षात्कारकर्ता एक सामाजिक स्थिति में केवल पारस्परिक वार्तालाप से ही सम्बन्धित नहीं रह गया है बल्कि साक्षात्कार में अब उनकी भूमिका अति सक्रिय तथा अत्यन्त महत्वपूर्ण हो गयी है।

1.9.2 अवलोकन-

किसी सजीव प्राणी (जैसे मानव) द्वारा अपने ज्ञानेन्द्रियों (senses) के द्वारा अथवा किसी अन्य कृत्रिम उपकरण (जैसे बहुमापी) द्वारा बाह्य जगत का ज्ञान प्राप्त करना **प्रेक्षण** (Observation) कहलाता है। प्रेक्षण की क्रिया में संकलित आंकड़ों को भी 'प्रेक्षण' कहते हैं। प्रेक्षण वैज्ञानिक विधि का प्रमुख अंग है।

सी.ए. मोजर ने अपनी पुस्तक 'सर्वे मैथड्स इन सोशल इनवेस्टीगेशन' में स्पष्ट किया है कि अवलोकन में कानों तथा वाणी की अपेक्षा नेत्रों के प्रयोग की स्वतन्त्रता पर बल दिया जाता है। अर्थात्, यह किसी घटना को उसके वास्तविक रूप में देखने पर बल देता है। श्रीमती पी.वी.यंग ने अपनी कृति ''सांइटिफिक सोशल सर्वेज एण्ड रिसर्च'' में कहा है कि ''अवलोकन को नेत्रों द्वारा सामूहिक व्यवहार एवं जटिल सामाजिक संस्थाओं के साथ-साथ सम्पूर्णता की रचना करने वाली पृथक इकायों के अध्ययन की विचारपूर्ण पद्धति के रूप में प्रयुक्त किया जा सकता है।''[1] अन्यत्र श्रीमती यंग लिखती है कि ''अवलोकन स्वत: विकसित घटनाओं का उनके घटित होने के समय ही अपने नेत्रों द्वारा व्यवस्थित तथा जानबूझ कर किया गया अध्ययन है।'' इन परिभाषाओं में निम्न बातों पर बल दिया गया है-

- (1) अवलोकन का सम्बन्ध कृत्रिम घटनाओं एवं व्यवहारों से न हो कर, स्वाभाविक रूप से अथवा स्वत: विकसित होने वाली घटनाओं से है।
- (2) अवलोकनकर्त्ता की उपस्थिति घटनाओं के घटित होने के समय ही आवश्यक है ताकि वह उन्हें उसी समय देख सके।
- (3) अवलोकन को सोच समझकर या व्यवस्थित रूप में आयोजित किया जाता है।

उपरोक्त परिभाषाओं के अध्ययन से यह स्पष्ट है कि प्रेक्षण विधि, प्राथमिक सामग्री (Primary data) के संग्रहण की प्रत्यक्ष विधि है। प्रेक्षण का तात्पर्य उस प्रविधि से है जिसमें नेत्रों द्वारा नवीन अथवा प्राथमिक तत्यों का विचाारपूर्वक संकलन किया जाता है। उपरोक्त विश्लेषण के आधार पर हम प्रेक्षण की निम्न विशेषतायें स्पष्ट कर सकते हैं-

मानवीय इन्द्रियों का पूर्ण प्रयोग- यद्यपि अवलोकन में हम कानों एवं वाक् शक्ति का प्रयोग भी करते हैं, परन्तु इनका प्रयोग अपेक्षाकृत कम होता है। इसमें नेत्रों के प्रयोग पर अधिक बल दिया जाता है। अर्थात्, अवलोकनकर्त्ता जो भी देखता है- वही संकलित करता है।

उद्देश्यपूर्ण एवं सूक्ष्म अध्ययन- प्रेक्षण विधि सामान्य निरीक्षण से भिन्न होती है। हम हर समय ही कुछ न कुछ देखते रहते हैं, परन्तु वैज्ञानिक दृष्टिकोण से इसे प्रेक्षण नहीं कहा जा सकता। वैज्ञानिक अवलोकन का एक निश्चित उद्देश्य होता है और उसी उद्देश्य को दृष्टिगत रखते हुये समाज वैज्ञानिक सामाजिक घटनाओं का अवलोकन करते हैं।

प्रत्यक्ष अध्ययन- प्रेक्षण पद्धति की यह विशेषता है कि इसमें अनुसन्धानकर्त्ता स्वयं ही अध्ययन क्षेत्र में जाकर अवलोकन करता है, और वांछित सूचनाएँ एकत्र करता है।

कार्य-कारण सम्बन्धों का पता लगाना- सामान्य प्रेक्षण में प्रेक्षणकर्ता घटनाओं को केवल सतही तौर पर देखता है, जबकि वैज्ञानिक अवलोकन में घटनाओं के बीच विद्यमान कार्य-कारण सम्बन्धों को खोजा जाता है ताकि उनक्े आधार पर सिद्धान्तों का निर्माण किया जा सके।

निष्पक्षता- चूंकि प्रेक्षण में प्रेक्षणकर्ता स्वयं अपनी आँखों से घटनाओं को घटते हुये देखता है, अत: उसके निष्कर्ष निष्पक्ष होते हैं।

1.9 अध्ययन का महत्व एवं सार्थकता-

भारत प्राचीन काल से ही समृद्धि के शिखर पर रहा है। उसके शिखर पर रहने का मुख्य आधार उसमें अपने अनुभवों को पीढ़ी दर पीढ़ी आगे बढ़ाने की क्षमता है। जहां अन्य प्राणी पीढ़ी दर पीढ़ी अपनी इन्हीं जीवन प्रक्रियाओं को दुहराते हैं और हर पीढ़ी में नए सिरे से ज्ञानार्जन प्रारम्भ करते हैं, मनुष्य अपने ज्ञान को आगे बढ़ाता रहता है। ज्ञान वृद्धि के साथ-साथ उसकी चिन्तन शक्ति में भी वृद्धि होती जाती है और वह अपने वातावरण से अधिक समन्वय स्थापित कर

पाता है। सैकड़ों हजारों वर्षों से चली आ रही। यह मानव यात्रा जहाँ जैविक क्षेत्र में कुण्डलाकार है अथवा जन्म से शैशव-युवावस्था मृत्यु के वृत में घूम रही है, वहीं ज्ञान के क्षेत्र में निरन्तर प्रगति पर है। उसकी प्रगति का मूल आधार उसकी जिज्ञासा है।

मनुष्य सदैव अपने वातावरण को जिज्ञासा की दृष्टि से देखता है उसे समझने तथा नियंत्रित करने का प्रयास करता है। बहुधा उसकी दृष्टि अन्तर्मुखी हो जाती है और वह अपने को भी समझने का प्रयास करता है। जिज्ञासु मानव की शक्ति असीमित है जैसे ही उसके सामने कोई समस्या आती है, उसकी समस्त शारीरिक और मानसिक शक्तियाँ उसके समाधान के लिए एकाग्र हो जाती हैं। दिन-रात कठोर परिश्रम, चिन्तन एवं मनन करके मनुष्य अपनी समस्या का समाधान कर लेता है।

सम्पूर्ण विश्व में समय-समय पर चिन्तन, सम्प्रदाय मानव प्रकृति, सम्बन्ध, उपासना जीवन-जगत, कतिपय विषयों पर मानवता के परिष्कृतम सांसारिक एवं आध्यात्मिक विकास हेतु महामानव अवतरित होते आए हैं। संसार के समस्त प्राणियों की बौद्धिक चेतना इन समस्त महामानवों से अनुप्राणित, परिचर्चित, प्रभावित एवं लाभान्वित होती रही है। इन समस्त महामानवों की सर्वाधिक महत्वपूर्ण उपलब्धि थी दर्शन। यही समस्त मूर्धन्य व्यावहारिक तथा सैद्धान्तिक गतिविधियों का लक्ष्य माना जाता था तथा विविध जातियों वाले इस बड़े भू-भाग की सामाजिक संस्कृति में जो विविधता है उसमें एकता और तारतम्य स्थापित करने वाला यही एक बिन्दु था ऐसी रत्न प्रसविनी वसुधा भारतवर्ष में राष्ट्रऋषि नानाजी देशमुख जैसे महापुरुषों ने जन्म लिया तथा अपने जीवन काल को आध्यात्मिक प्रयोग की एक अविछिन्न श्रंखला बना दिया।

जब कोई पुरुष अपनी इच्छाओं एवं अपने परिवार के स्वार्थों को त्याग करके सामान्य जनों की आकांक्षाओं, अपेक्षाओं तथा आवश्यकताओं का ध्यान रखते हैं ऐसे ही लोग महापुरुष कहलाते हैं। वे तन, मन, धन एवं प्राण को संकट में डाल कर भी दीन –दुखीजनों की भलाई करते है। भलाई करने के रास्ते में यदि कोई बाधा पहुंचाता है, तो उसका डटकर मुकाबला करते हैं और पीछे मुड़ने का नाम नहीं लेते हैं। ऐसे महापुरुष इस नश्वर संसार में कभी-कभी जन्म लेते हैं। सृष्टि की यह परम्परा रही है कि जब भी समाज में दुष्प्रवृत्तियों का प्रादुर्भाव हुआ है, तब उनके प्रतिकार हेतु अदृष्ट की प्रेरणा से कोई ना कोई शक्ति महामानव के रूप में धरा पर अवतरित हुई है जिसने इन प्रवृत्तियों पर कुठाराघात कर मानवता के मूल्य को विघटित होने से बचाया है उसी ने सामान्य मानव समाज को सही दिशा दी है, साथ ही विकृत मूल्यों का उदान्तीकरण भी किया है। मानव के इस नव संस्करण तथा परिष्करण की प्रक्रिया सम्पूर्ण विश्व में चलती रहती है।

राष्ट्रऋषि नानाजी देशमुख आधुनिक भारत के महान पुरोधा थे। वे दार्शनिक, चिन्तक, समाजसेवी एवं शिक्षाविद् थे। उनके बहुआयामी व्यक्तित्व को शब्दों की सीमा में नहीं बांधा जा सकता है। उनका कृतित्व ही स्वयमेव उनका व्यक्तित्व है। कर्मयोगी नानाजी आज अपने इसी कर्म प्रधान एवं ओजस्वी व्यक्तित्व के कारण सभी के प्रेरणा स्रोत हैं। उन्होंने न केवल भारत को, अपितु सम्पूर्ण विश्व को श्रम व उद्यमिता के माध्यम से उन जीवन मूल्यों से अवगत कराया जिनकी आज मानव निर्माण में महती आवश्यकता है।

नानाजी देशमुख अल्पायु में ही माता-पिता की छत्रछाया से वंचित होने के कारण, दरिद्रता से लोहा लेते हुए निःस्वार्थ एवं निर्मोही भाव से जीवनयापन किया। उच्च शिक्षा, गृहस्थ जीवन तथा व्यक्तिगत स्वार्थ को त्याग कर अपना समूचा जीवन समाज और राष्ट्र के लिए समर्पित कर दिया। नानाजी के गहन चिंतन और उनके कर्मयोग का ही परिणाम है कि मानवीय विकास के सभी आयामों को उन्होंने राष्ट्रीय विकास की मुख्यधारा से जोड़कर समग्र विकास का मौलिक आयाम प्रस्तुत किया है। सार्वभौमिक सर्वांगीण व्यक्तित्व विकास की परिकल्पना को लेकर सर्वप्रथम उन्होंने देश में सरस्वती शिशु मंदिर विद्यालयों की स्थापना कर इस दिशा में अपना अभिनव प्रयोग किया। इसी श्रंखला में **“आदिवासी और वंचित वर्गों के लिए शिक्षा की व्यवस्था”**, बाल मन को प्रभावित करने के लिए **‘नन्हीं दुनिया’** की कल्पना को साकार करने वाले नानाजी के सृजनात्मक चिन्तन के ये अविस्मरणीय उदाहरण है। इसके साथ ही उन्होंने श्री राम की तपोभूमि चित्रकूट में उच्च शिक्षा की अवधारणा को भी मूर्त रूप देकर **‘शिक्षा’**, **‘अनुसंधान’ और ‘प्रसार’** की दिशा का निर्धारण कर ग्रामीण क्षेत्रों के विकास के लिए एक नया निदर्श(मॉडल) प्रस्तुत किया, जिससे उच्च शिक्षित

युवाओं के मन में ग्रामीण भारत के प्रति संवेदना और उसके विकास के प्रति मन में ऐसी ऊर्जा का संचार हो सके जो ग्रामीण क्षेत्रों के उन्नयन में सहायक बन सकें।

वर्तमान शिक्षा व्यवस्था लोगों को शिक्षित होने के बाद भी उपयुक्त रोजगार पाने में अक्षम है इसलिए दिनोंदिन शिक्षित बेरोजगारों की कतार लम्बी हो रही है आज एक आदर्श मॉडल की आवश्यकता है जो व्यवसाय तथा छात्रों में मानवता के नाना जी की अन्वेषक तत्कालीन समय के शैक्षिक परिदृश्य की विसंगतियों को अनुभूत कर लिया था इसी आवश्यकता की पूर्ति हेतु उन्होंने ऐसे प्रश्नों की स्थापना की जो ग्रामीण बेरोजगारी का वर्तमान समय में शंकरकी भावना जागृत का शिक्षा राष्ट्रीय विकास की एक सशक्त स्तम्भ के रूप में अपनी सार्थकता को सिद्ध कर सके इसके लिए हमें युगपुरुष नानाजी देशमुख के शैक्षिक चिंतन को जानने समझने एवं उस पर मंथन करने की आवश्यकता है जिससे ग्रामीण भारत में शिक्षा को एक सही दिशा मिल सके।

द्वितीय अध्याय

सम्बन्धित शोध साहित्य का अध्ययन

2.1 प्रस्तावना-

सम्बन्धित साहित्य का अध्ययन शोध का अभिन्न अंग होता है। यह किसी शोधकर्ता के लिए समस्या विशेष के मूल में पहुँचने का महत्वपूर्ण साधन है तथा अनुसंधान का प्राथमिक आधार है। शोध प्रबंधन की वास्तविक योजना एवं उसके संचालन से पूर्व शोधकर्ता अपनी समस्या से सम्बन्धित उपलब्ध साहित्य का अध्ययन इसलिए करता है क्योंकि यह उसे अनावश्यक पुनरावृति से बचाता है। विषय सम्बन्धी अन्तर्दृष्टि प्रदान करता है तथा नई समस्याओं की जानकारी देता है। यह परिणामों के सत्यापन के लिए भी आवश्यक है। इसके अभाव में कोई भी अनुसंधान उच्च स्तर का नहीं हो सकता है सम्बन्धित साहित्य का अध्ययन शोधकर्ता द्वारा निम्न बिन्दुओं को ध्यान में रखकर किया गया है-

- सम्बन्धित साहित्य सर्वेक्षण सैद्धान्तिक पृष्ठभूमि को स्पष्ट करता है तथा विभिन्न सिद्धान्तों एवं निहित भावनाओं को समझने में सहायता करता है।
- अनुसंधान के लिए किए गए क्षेत्र में कितना और किस प्रकार का कार्य हो चुका है इसकी जानकारी सम्बन्धित साहित्य सर्वेक्षण से प्राप्त होती है तथा अनावश्यक पुनरावृति से बचाता है।
- सम्बन्धित साहित्य सर्वेक्षण समस्या के परिभाषा कारण अवधारणा तथा परिकल्पना के निर्माण में सहायता करता है।
- सम्बन्धित साहित्य सर्वेक्षण अनुसंधानकर्ता के ज्ञान कोष में वृद्धि करता है तथा वर्तमान अध्ययन के लिए शोध की विधियों का सुझाव देता है पूर्व साहित्य का अध्ययन शोधकर्ता को उपयुक्त प्रतिचयन विधि एवं प्रसन्न करने के संगीत उपकरणों के चयन के संगठन एवं विश्लेषण की तकनीकी के चयन में अन्तर्दृष्टि प्रदान करता है।
- सम्बन्धित साहित्य सर्वेक्षण शोध का को अपने शोध परिणामों का विश्लेषण एवं व्याख्या करने में पूर्व शोध के तुल्य आते प्रदान करता है जो परिणामों के अर्थ निर्णय एवं व्याख्या में सहायक होते हैं।
- सम्बन्धित साहित्य सर्वेक्षण शोध करता को अपनी समस्या के क्षेत्र की सीमा निर्धारण एवं उसे दिशा देने में सहायक होता है।
- सम्बन्धित साहित्य सर्वेक्षण शोध का को लाभ एवं अनुपयोगी समस्याओं से बचाता है जिससे मौलिक एवं उपयोगी अनुसंधान सम्भव होता है।
- सम्बन्धित साहित्य सर्वेक्षण शोध करता को महत्वपूर्ण सूचना प्रदान करता है कि पूर्व अनुसंधान को अपने अध्ययन में एवं आगे अनुसंधान हेतु क्या अनुशंसाएं की थी।
- सन्बम्धित साहित्य के अध्ययन के महत्व को ध्यान में रखते हुए शोधकर्ताओं ने शोध समस्या की रूपरेखा तैयार करने से पूर्व शोध से सम्बन्धित जिस साहित्य का अध्ययन किया वह निम्नलिखित बिन्दुओं के अन्तर्गत प्रस्तुत हैं।

2.2 शैक्षिक योगदान से सम्बन्धित कतिपय शोध अध्ययन –

पं0 दीनदयाल सपाध्याय के सामाजिक एवं शैक्षिक दर्शन पर विभिन्न कषोत्रों के विद्वानों के मत निम्नवत् हैं-

सिंह (1991) के अनुसार प0 दीनदयाल महान चिंतक, कर्मयोगी, मनीषी एवं राष्ट्रवादी थे। भारत के राजनीतिक क्षितिज पर उनका उदय एक महत्वपूर्ण घटना थी वह देश के गौरवशाली अतीत से भविष्य को जोड़ने वाले शिल्पी थे। उन्होंने प्राचीन भारतीय जीवन-दर्शन के आधार पर सामयिक व्यवस्थाओं के संबन्ध में मौलिक चिन्तन करके उन्हें

दार्शनिक दृष्टिकोण से परिपूर्ण व्यावहारिक व्याख्यायें दी। आज के परिप्रेक्ष्य में भी उनके विचार उत्तने ही प्रासंगिक तथा समाज और देश के समक्ष उपस्थित समस्याओं के समाधान के लिए सुसंगत हैं।

सिंह (1991) की शब्दावली में पं0 दीनदयाल जी भारतीय संस्कृति, अर्थशास्त्र तथा राजनीति के प्रकाण्ड पंडित थे। इन विषयों पर उनके विचार आज भी उतने ही प्रासंगिक तथा भारतीय परिवेश के अनुरूप है। निर्धन और गरीबों के लिए अंत्योदय जैसे कल्याणकारी कार्यक्रम उन्हीं के आर्थिक चिन्तन पर आधारित हैं । अपने आर्थिक चिन्तन की व्याख्या करते हुए उन्होंने स्वीकार किया है कि आर्थिक योजनाओं तथा आर्थिक प्रगति का मापन अल्प समाज के ऊपर की सीढ़ी पर पहुँचे व्यक्ति से नहीं, नीचे स्तर पर विद्यमान व्यक्ति से होगा आज देश में करोड़ों ऐसे मानव है जो मानव के किसी भी अधिकार का उपभोग नहीं कर पाते। शासन के नियम और व्यवस्थायें, योजनायें इनको अपनी परिसी में लेकर नहीं चलती. प्रत्युत उनी मार्ग का रोगा ही समझा जात है भावना और सिद्धान्त है कि वह मैले कुऔले अनपढ सी-सादे लोग हमारे नारायण है हमे इनकी पूजा करनी है। जिस दिन इनको यक्स, सुन्दर यार बनाकर देंगे जिसा दिन हम इनके बच्चों और स्त्रियों को शिक्षा देकर इनकी आय को ऊँचा उठा देंगे उस दिन हमारा आतृभाव व्यक्त होगा। ग्रामों में जहाँ समय अचल खड़ा है, जही माता और पिता अपने बच्चों के भविष्य को बनाने में असमर्थ है वहीं जब तक हम आशा और पुरुषार्थ का संदेश नहीं पहुंचा पायेंगे, तब तक हम राष्ट्र को जागृत नहीं कर सकेंगे। हमारी श्रद्धा का केन्द्र, आराध्य और उपास्य, हमारे पराक्रम और प्रयत्न का उपकरण तथा उपलब्धियों का मानदण्ड वह मानव होगा जो आज शब्दशः अनिकेत और अपरिग्रही है।

सिंह (1991) के अनुसार पं0 दीनदयाल ने विश्वभर में चलने वाले आज के सभी राजनैतिक, सामाजिक तथा आर्थिक अधूरे बादों से ऊपर उठकर एक अनूठे मौलिक एवं सर्वांगपूर्ण एकात्म मानववाद की अभिनव और व्यावहारिक परिकल्पना दी. जिसमें मानव के सर्वांगीण विकास पर विशेष बल दिया गया है उन्होंने यह प्रतिपादित किया कि कैसे नर से नारायण बनने के सोपान तय किए जा सकते है।

सिंह(1991) के मतानुसार पं0 दीनदयाल जी देश की एकता और अखण्डता की रक्षा के प्रति पूरी तरह समर्पित थे। उन्होंने अपने जीवन के हर क्षण को समाज सेवा में लगाया। उन्होंने परिस्थिति से पराजित होकर कमी भी सिद्धांतों से समझौता नहीं किया। निडर-स्वभाव, मधुर-वाणी किंतु विचारों की दृढ़ता के धनी पं0 जी ने संघर्ष पूर्ण जीवन में सदैव कर्म की श्रेष्ठता को स्थापित किया। उन्होंने व्यक्तिगत सुख सुविधा की कोई परवाह नहीं की। यह सच्चे अर्थो में कर्मयोगी थे ऐसे महामानव को में आदर के साथ स्मरण कर श्रद्धांजलि अर्पित करता हूँ। उनके जीवन आदर्शों और सिद्धांतों से प्रेरणा प्राप्त कर तथा उनके दिखाए मार्ग का अनुसरण करके हम भारत को एक महान एवं गौरवशाली राष्ट्र बनाने में सफल हो सकेंगे।

जोशी (1991) ने पं0 दीनदयाल उपाध्याय के समाज रचना चिन्तन को व्यक्त करते हुए लिखा है जैसे व्यक्ति की एक आत्मा होती है वैसे ही समाज की भी आत्मा होती है उसमें भी चतन्य-माव है और इस चिति का प्रकटीकरण इसका सम्यक रूप से अनुभव ही समाज को स्वस्थ एवं गतिमान बनाता है यह थिति ही उसके विराट रूप को प्रदर्शित करती है यही समाज को ठीक प्रकार से संचालित कर सकती है, उसके ताप को ठीक प्रकार से नियंत्रित कर सकती है और समाज को समान रूप में अपनी स्थिति बनाये रखने में समर्थ करती है। इस सामाजिक चेतना को यदि नहीं बनाये रखा जाता तो समाज अपनी सारी मूल प्रकृति को खो बैठता है व्यक्ति की आत्मा और समाज की सामूहिक चेतना का साक्षात्कार ही सच्चा जीवन-दर्शन प्रदान करेगा दीनदयाल जी की विचारधारा के तहत व्यक्ति और समष्टि का सम्यक सम्बन्ध होना चाहिए व्यक्ति यदि सूक्ष्म है तो समष्टि विराट है। व्यष्टि यदि बूंद है तो समष्टि सागर है। उनके द्वारा शिक्षा को व्यष्टि और समष्टि से जोड़ने वाला प्रमुख तत्त्व स्वीकार किया गया है।

जोशी (1991) पं0 दीनदयाल जी कहते थे कि जीवन के लिए महत्वपूर्ण तत्त्व प्राणवायु को यदि आप शरीर के हर जीवकोष में पहुँचाना चाहते है तो उसके लिए प्राणायाम करना पड़ता है। उसी प्रकार भौतिक क्रियाकलापों के लिए भीतिक तत्त्व 'अर्थ है अतः समाज को अर्थायाम करना चाहिए। यदि अर्थ एक ही व्यक्ति के पास अधिक मात्रा में संचित हो जाये तो वह भी सामाजिक स्वास्थ्य के लिए प्रदूषण पैदा करता है। प्राणायाम की भाँति अर्थायाम सामाजिक स्वास्थ्य के लिए आवश्यक है. इसमें उपभोग पर संयम, उत्पादन कैसा करें, और उपभोग कितना और किस सीमा तक ये सारे सिद्धान्त बिल्कुल स्वाभाविक रूप में प्राप्त होते चलते हैं।

जोशी (1991) ने एकात्म मानववाद को स्पष्ट करते हुए लिखा है यह विचार मानव और मानव समाज की मूल प्रकृति के विश्लेषण पर आधारित है मनुष्य की चार मोटी विधार्य- मन, बुद्धि, शरीर और आत्मा भारत में अभी तक सर्वमान्य हैं। ऐसा समग्र चिंतन, जिसमें व्यक्ति यानी मन, बुद्धि और आत्मा तथा समाज माने देश, जन, संस्कृति और चिति, जिसमें व्यक्ति और समष्टि के सम्यक सम्बंध शिक्षा, कर्म, कर्मफल और यज्ञ द्वारा परिभाषित हैं जिसमें धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष चारों पुरुषार्थों का विचार है। एक स्वस्थ समाज रचना के लिए जीवन-दर्शन एवं विचार-दर्शन के रूप में हमारे सामने उपस्थित है। इस एकात्म मानववाद का हम गहराई से अनुशीलन करें। इसके आलोक में अच्छे. स्वस्थ समाज का निर्माण करें।

एकात्म मानववाद का अनुशीलन और उस पर विचार विमर्श करना ही शायद इनके प्रति सबसे महत्वपूर्ण श्रद्धांजलि होगी।

शेषाद्रि (1991) की शब्दावली में पं0 जी के बारे में कहा गया है वे सूर्य जैसे थे। जिसका स्वभाव ही प्रकाश देना है। वे फूल जैसे थे जिसका स्वभाव ही सुगंध विग्रना है।

शेषाद्रि (1991) पं0 दीनदयाल उपाध्याय जी सायकोटि के दारशनिक थे।

शेषाद्रि (1991) नेतृत्व के अगणित गुणों के धनी जिनके इशारे पर हजारों सहयोगी अपने प्राण तक न्यौछावर करने को तैयार को जाते थे ऐसा प्रेरणादायक दैदीप्यमान व्यक्तित्व था पं0 दीनदयाल जी का। जिसने एक बार भी उन्हें देखा या उनकी वाणी सुनी बस उनका हो गया। उनमें अत्यादरपूर्वक स्मरण करने योग्य असामान्य मुद्धिमता सागर सदृश हृदय की विशालता थी। विधार मंडन करने बैठते. साक्षात् उपनिषद ऋवियों जैसे विभूतिमत्व।

त्रिपाठी (1991) एक घटना का जिक्र करते हुए त्रिपाठी जी ने निजी का में सरकारी साधन का प्रयोग नहीं करने का उल्लेख किया है।

त्रिपाठी (1991) ने पं0 जी की समाज की तरक्की के मापदण्ड का उल्लेख करते हुए लिखा है कि समाज की कोई प्रगति तब तक नहीं ऑकी या मानी जा सकती जब तक समाज के सबसे निचले स्तर पर बैठे आदमी का उत्थान नहीं होता उसका आर्थिक जीवन स्तर ऊँचा नहीं उठता। पं0 जी राजनीतिक अस्पृश्यता के विरोधी थे राजनीति क्षेत्र में उन्होंने स्वतः के आचार-विचार से दो चीजें प्रदान की, प्रथमतः अपने विरुद्ध विचार रखने वाले व्यक्ति या दल के प्रति आदर-भाव व दूसरी समता का जीवन-दर्शन। पं जी कहा करते थे कि देश की राष्ट्रीय आकांक्षाओं को जगाओ उससे यक्तिगत लिप्सा और व्यक्तिगत महत्वाकांक्षा से उत्पन्न स्वार्थ, भ्रष्टाचार आदि बुराइयां अपने आप दूर हो जायेगी। तब राष्ट्र में छोटेपन की भावना नहीं रहेगी। हर क्षेत्र में राष्ट्र को गुणी बनायें उसमें व्यक्तिगत आकांक्षायें त्यागनी पडेगी वे खुद ही छूट जायेगी क्योकि बडी चीज मिलने पर छोटी चीज का मोह किसी बुद्धिमान व्यक्ति को नहीं रहता।

मैनचेस्टर गर्जियन (1963 7 नवम्बर) ने लिखा था- श्री उपाध्याय दृष्टि में से जाने योग्य व्यक्ति हैं।"

भण्डारी (ramm), पं0 दीनदयाल उपाध्याय की विचारधारा को व्यक्त करते हुए लिखा है कि समता या मानवता ये मानव को स्वभाव संस्कृति और उसकी मानसिकता से संबंध रखते है। इन सामान्य मानवीय सम्बन्धों का उल्लंघन करने वालों का दण्ड देने के लिए कानून बनाये जा सकते है लेकिन दण्ड देने से सौहार्द या सदभाव का निर्माण नहीं हो सकता।

भण्डारी (1001) पं. दीनदयाल जी के एकात्मता एवं अपनत्व के नाव के विकास से ही सामाजिक समरसता की स्थापना सम्भव है। करबों में, शहरों में जहीं लोग शिक्षित हो गए है. सामाजिक रूप से बराबरी का व्यवहार होता है किन्तु गांवों में पानी भरते समय भिन्न-भिन्न प्रकार से बराबरी के अवसरों पर अड़चनों का सामना करना पडता है। ऐसे मामलों की जड़ में परायेपन की भावना है शुभ मानसिक परायेषन का तार्किक परिणाम है। एकात्मता के भाव के उत्पन्न होने पर सामाजिक बुराइयाँ को दूर करने के लिए बनाये गए विधान को जानबूझकर तोड़ने वालों को रोकने की प्रक्रिया सार्थक और वारगर होगी। इसी एकात्मता का स्वाभाविक परिणाम समरसता है।

स्त्रियों में सामाजिक शिक्षण एवं जागृति की जरूरत है। अपनत्य-माय जागृत होने के कारण वे अपने जन्मजात अपम बच्चे को प्यार करती हैं तथा समाज के किसी वर्ग के माकित को स्नेह देने में पीछे नहीं रहेंगी। यही सामाजिक समरसता के निर्माण का सही दृष्टिकोण है।

भण्डारी (1991) पं0 दीनदयाल सामाजिक समरसता की स्थापना हेतु अपने व्यवहार का आदर्श स्थापित करते थे। वे खुद भी आग्रह करते थे कि उन्हें सामाजिक रूप से पक्षित वर्ग की बस्ती में रहने वाले कार्यकर्ताओं के साथ हहराया जाय। वे सदा ही ऐसे वर्ग के साथ एकाम-भाव कायम करने की कोशिश करते थे। एकात्मता और आत्मीयता को सामाजिक श्रेष्ठता का मापदंड स्वीकार करना होगा जहाँ पर कि अर्थ का आधिपत्य है. इन त्रुटिपूर्ण मापदण्डों को बदलना होगा। आपसी समझ बराबरी व आत्मीयता का भाव ही समाज में समता और समरसता स्थापित करने का मार्ग है।

पुण्डरीक (1901) ने पं॰ जी के बारे में मत व्यक्त करते हुए लिखा है- पं॰जी ने भारतीय जीवन-दर्शन का सूक्ष्मतम आययन चिन्तन एवं मनन किया था। उनके मौलिक विचारों, प्रतिभा एवं कुशल नेतृत्व से भारतीय जनमानस को दैदीप्यमान अपेक्षाय दुर्भाग्यवश जब वह समय आया कि वह अपने चिन्तन की जोति को जन-जन मे भर सकते, किसी की स्वार्थ लिप्सा ने उनका जीवनदीप गुल कर दिया।

यही तो परिणति है हमारे देश के ईमानदार नेतृत्व की। भारतीय राष्ट्रीय जनसंघ में वे एक ऐसे सुधारवादी नेता थे जिनकी तुलना वर्तमान सोवियत संध में साम्पवादी दल के नेता मिखाइल गोर्वाच्योब से की जा सकती है। मुझे तो पं0 जी का कथन- "राष्ट्र के चिर जीवन के लिए समष्टि भाव आवश्यक है में यष्टि दिखलाई पड़ती है। काश आज वह हमारे बीच होते तो शायद वह कड़वाहट वातावरण में न होती जिसे हमें भोगना पड रहा है।

बाजपेयी (1987) सादा जीवन और उच्च्व विचार की जीती जागती प्रतिमा पंढ दीनदयाल उपाध्याय के व्यक्तित्व एवं कर्तृत्व पर काफी लिखा जा चुका है किन्तु जितनी गहराई और विस्तार में जाकर श्री दत्तोपंत ठेगड़ी, श्री नेने श्री भिशीकर, श्री केलकर, श्री कुलकर्णी, श्री जोग तथा श्री देवधर ने उपाध्याय जी के मूलभूत चिन्तन के विविध पहलुओं को स्थायी और तात्कालिक दोनों परिपेक्ष्यों में प्रभावी रीति से प्रस्तुत किया है वह वस्तुत अभिनन्दनीय है। उपाध्याय जी के विचार -दर्शन पर प्रकाशित यह सात खण्ड प्रत्येक सामाजिक-राजनीतिक कार्यकर्ता के पठन मनन और चिन्तन का विषय होने चाहिए।

बाजपेयी (2006) ने लिखा है जनसंघ को बनाने का, बढ़ाने का यदि किसी एक व्यक्ति को श्रेय दिया जा सकता है तो वह उपाध्याय जी को है। देखने में सीधे -सादे लेकिन मौलिक विचारक, कुशल संगठनकर्ता, दूरदर्शी नेता एवं सबको साथ लेकर चलने का जो गुण उन्होंने अपने जीवन में प्रकट किया वह नयी पीढ़ी के लिए मार्गदर्शन का काम करेगा। ऊँची से ऊँची शिक्षा प्राप्त करके उन्होंने नौकरी नहीं की, वे परिवार के बन्धनों में नहीं बंधे, शरीर का कण-कण और जीवन का क्षण-क्षण उन्होंने भारत माता के मस्तक को सौभाग्य के सिंदूर से मंडित करने के लिए समर्पित कर दिया।

शर्मा (2006) ने पं0 जी के बारे में मत व्यक्त करते हुए लिखा है- "हमारी पीढ़ी ने स्वर्गीय श्री दीनदयाल जी को एक गम्भीर विद्वान, कुशल लेखक, प्रभावशाली वक्ता और आदरणीय नेता के रूप में पहचाना और सराहा है। हम उनके कृतज्ञ हैं कि उन्होंने समाज में नये गुग का आहवान किया और संघर्ष से टक्कर ली। वह अखिल भारतीय जनसंघ के अध्यक्ष हो । जनसंघ की पतवार अपने समर्थ हाथों में लेकर उन्होंने न कभी तूफान की परवाह की, न प्रलय की। वह अनुभव में वृद्ध और उत्साह में सदा तरुण रहे । उनके जिस अनुपम गुण ने मुझे सबसे अधिक प्रभावित किया, वह थी उनकी सरलता। वह भारतीय ज्ञान और संस्कृति के मर्मज्ञ थे पर उनकी मर्मज्ञता ज्ञान की प्रखर ज्वाला न बनकर श्रद्धा से ओतप्रोत दीपशिखा की तरह शान्त, स्निग्ध, स्थिर और रुचिकर थी।"

भिशीकर (1991) ने पं0 जी के बारे में मत व्यक्त किया है पं0 दीनदयाल उपाध्याय स्वतंत्रता के बाद के काल के एक वर्द्धमान राजनीतिक दल के प्रमुख नेता एवं संगठक थे। राजनीतिक नेता होते हुये भी उन्होंने सदैव राष्ट्र-निर्माण का ही समग्र विचार किया। राजनीतिक दल के कार्य को भी उन्होंने राष्ट्र निर्माण के कार्य का अंग ही माना और साधना भी। इसीलिये उनके राष्ट्र-चिन्तन की परिधि तो विशाल है ही, साथ ही वह चिंतन मूलगामी भी है अनेक प्रचलित मान्यताओं एवं धारणाओं को झकझोरते हुये उन्होंने यहाँ के राष्ट्र-जीवन की स्वाभाविक धारा का दर्शन कराया है ।

ठेंगड़ी (2006) पं0 जी भारतीयता के केवल इसलिए समर्थक नहीं थे कि वह उनकी राष्ट्रीय बपौती थी। वे जानते थे कि मानवता के दोष, विशेषकर जगत के दोष इसी भारतीय संस्कृति के आधार पर दूर किये जा सकते है वास्तविक एवं स्थायी समानता लाने का तरीका था वैज्ञानिक हिन्दू तरीका जीवन के चार लक्ष्यों की प्राप्ति की इस पद्धति ने वास्तविक समानता के आधार पर समाज के ढाँचे के निर्माण में हिन्दुओं की सहायता की। पं0 जी का स्पष्ट मत था कि

यदि समाजवाद कभी भी अपना लक्ष्य प्राप्त कर सका तो ऐसा इसी भारतीय पद्धति के आधार पर हो सकेगा वे अपने समन्वयवाद के आधार पर एक ऐसे विश्व-राज्य की कल्पना कर सके, जिसमें विभिन्न राष्ट्रों की संस्कृतियां विकसित हों और एक ऐसा मानव-धर्म उत्पन्न हो, जिसमें सब धर्मों का यहाँ तक कि भौतिकवाद का भी समावेश हो।

देसाई, मोरारजी (1991) ने प0 जी के बारे मे अपना मत व्यक्त करते हुए स्वीकार किया है कि- पं0 दीनदयाल जी भारतीय संस्कृति के केवल समर्थक ही नहीं बल्कि इसके सच्चे प्रतीक थे। वह आदर्श लोक-सेवक थे। उनकी निर्भयता का मूल उनकी सेवा की भावना में था। पद या वैभा के प्रति उनकी आसावित नहीं थी। अगर उनकी दिलचस्पी सत्ता था शन में होती तो वे इन दोनों को प्राप्त कर सकते थे लेकिन उन्होंने सादा जीवन बिताया और एकात्म मानववाद का अत्युत्कृष्ट दर्शन प्रतिपादित किया। उनका जीवन निस्वार्थ सेवा. बलिदान और परिश्रम की भावना का उदाहरण था। इन्हीं कारणों से दीनदयाल जी भारतीय संस्कृति के सच्चे प्रतीक थे।

गोलवलकर, मा0 स0 (1991) ने अपने मनोभावों को शब्द प्रदान करते हुए लिखा है- अपने देश के एक अति श्रेष्ठ पुरुष के बारे में ऐसा कहा जाता है कि एक बार एक वृद्ध सज्जन उनसे मिलने गये वे श्रेष्ठ पुरुष देश के मान्यता प्राप्त बहुत प्रसिद्ध जनसाधारण के नेता थे भेंट होते ही उन्होंने उक्त वृद्ध सज्जन को विनम्रतापूर्वक प्रणाम किया। जब लोगों ने उन्हें पूछा, तो उन्होंने बताया कि ये वृद्ध सज्जन प्राथमिक शाला में उनके गुरू थे। उन्होंने ही पढ़ाया और आशीर्वाद दिया कि बुद्धिमान बनो। उन्हीं के आशीर्वाद से वे बड़े बने हैं। वे अध्यापक जानते थे कि उनकी योग्यता केवल प्राथमिक शाला में पढ़ाने की थी। श्रेष्ठ पुरुष जितने विद्वान हुए और जिनकी श्रेष्ठता उन्होंने प्राप्त की, उतनी विद्वता और श्रेष्ठता प्रदान करने की क्षमता उनके अन्दर नहीं थी। मेरा भी पंडित दीनदयाल से जो कुछ सम्बन्ध बना वह उस प्राथमिक शाला के शिक्षक के रूप में ही समझना चाहिए-उससे अधिक नहीं। पंडित दीनदयाल जी एक विरोधी दल के प्रमुख व्यक्ति थे। उनका यह कर्तव्य था कि जो अनिष्ट दिखे और त्रुटिपूर्ण दिखाई दे, उसके विषय में अपने मत वे असंदिग्ध शब्दों में प्रकट करें। यह उन्होंने किया। परन्तु उनके हृदय के अन्दर कोई कटुता नहीं थी शब्दों में भी कोई कटुता नहीं थी। वे बड़े प्रेम से बोला करते। कभी किसी पर जरा भी नाराज नहीं हुए। बहुत खराबी होने पर भी खराबी करने वाले के प्रति अपशब्द का प्रयोग नहीं किया। वे युधिष्ठिर के समान थे दुय्योंधन में दुराक्षर था। इसलिए वे दुर्योधन' नहीं, सुयोधन" कहा करते थे दीनदयाल जी भी इसी परम्परा के थे। इसलिए उनमें कटुता दिखायी नहीं दी- शब्दों में नहीं, हृदय कें अन्दर नहीं और वाणी में भी नहीं।

डॉ0 सम्पूर्णानन्द जी ने पंडित जी के लेखों के संग्रह की भूमिका में लिखा है- "श्री दीनदयाल उपाध्याय जनसंघ के महान नेताओं में से एक थे, और मैं अपने सम्पूर्ण राजनीतिक जीवन में कांग्रेस का सदस्य रहा हूँ। अगर अपने देश में जनतंत्र की जडहें मजकूरा करनी है तो यह उस सहिष्णुला के महान गुण के साथ सामान्य अभिव्यक्ति है, जिसको अपनाकर हम सबको सीखना चाहिए कोई भी व्यक्ति सत्य पर अपना एकाधिकार होने का दान नहीं कर सकता कोई भी व्यक्ति परस्पर विपरीत प्रतीत होने वाले सभी समेकित पहलुओं के जिससे सत्य तक पहुँचा जा सकता है, एकमेव जानकार होने का दावा नहीं कर सकता। एक सच्चे जनतंत्र में हर व्यक्ति को यह अधिकार तथा कर्तव्य होना चाहिए कि वह सत्य को जैसा समझता है. उसको सुज्ञात विशिष्ट सीमाओं के अन्तर्गत अभिव्यक्त कर सके।

2.3 अध्ययन से सम्बन्धित लेख, समाचार, पत्र-पत्रिकाएँ, पुस्तकें-

चित्र 2.3

चित्र 2.4

चित्र 2.5
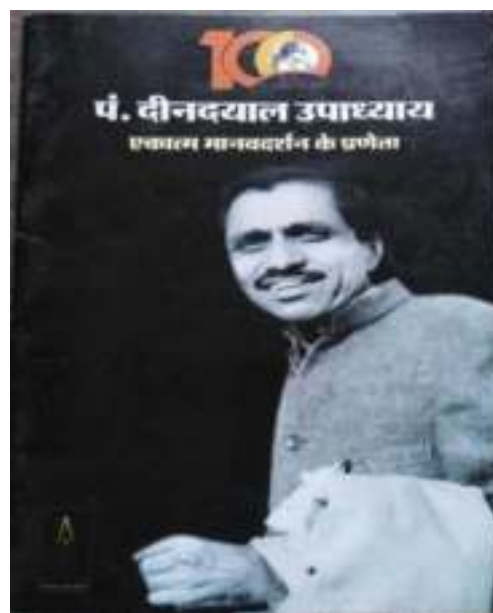
चित्र 2.6

2.4 समीक्षात्मक निष्कर्ष-

भविष्य निर्माण के लिए पं0 दीनदयाल जी भारत को समृद्धिशाली आधुनिक राष्ट्र बनाने की कल्पना लेकर चले थे उनका प्रमुख लक्ष्य पिछड़े, अशिक्षित, निर्धन एवं सामाजिक दृष्टि से उपेक्षित वर्गों का उत्थान कर उन्हें समाज का सम्मानित एवं सक्षम सदस्य बनाना था. तथा समाज से सबसे कमजोर वर्ग के उत्थान होने तक अपने कार्यक्रम को जारी रखने का आह्वान करते थे। उनका संदेश अमीर और गरीब पूँजीपति और श्रमिक सभी के लिए श्रम की अनिवार्यता था।

उनके सामाजिक, राजनैतिक, आर्थिक एवं शैक्षिक विचारों के विभिन्न विश्लेषक-विद्वानों द्वारा सभी क्षेत्रों के विचारों का अध्ययन कर यह स्वीकार किया गया कि उनकी शैक्षिक विचार-धारा वर्तमान भारत के शैक्षिक मूल्यों को आज के परिप्रेक्ष्य मे आधुनिक भौतिकीय ज्ञान एवं प्राचीन मानवीय मूल्यों को विकसित करने में सहायक होगी अस्तु प्रस्तुत अध्ययन द्वारा पूर्ववर्ती वैचारिक-विश्लेषणों में आगे की कड़ी जोड़ने का प्रयास किया गया है।

तृतीय अध्याय

दीनदयाल शोध संस्थान के संस्थापक नानाजी देशमुख का जीवन परिचय

3.1 प्रारम्भिक जीवन -

3.1.1 जन्म- नानाजी देशमुख का जन्म 11अक्तूबर 1916 को महाराष्ट्र के हिंगोली जिले कड़ोली नामक छोटे से गाँव में अक्षर ज्ञान से वंचित और लोकज्ञान में दक्ष दंपति अमृतराव देशमुख और पत्नी राजाबाई नामक ब्राह्मण परिवार में पांचवीं संतान के रूप में हुआ था। नानाजी जब पैदा हुए तब उनका नाम चंडिकादास अमृतराव देशमुख था। नानाजी गरीब मराठी ब्राह्मण परिवार से थे। बचपन से उन्होंने गरीबी को देखा था उनके परिवार को रोज के खाने के लिए कड़ी मेहनत करनी पड़ती थी। नानाजी का बचपन संघर्ष से भरा हुआ था।
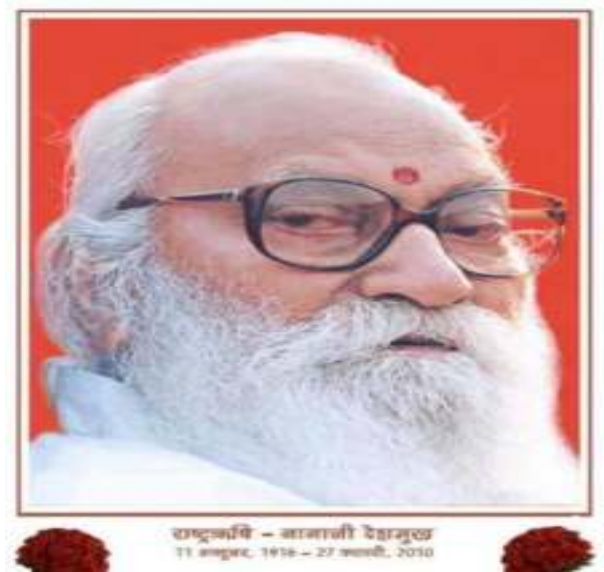
चित्र 3.7 नाना जी देशमुख

3.1.2 परिवार- नानाजी देशमुख के माता-पिता उन्हें कम उम्र में ही छोड़ कर स्वर्गवासी हो गए थे।

नाना जी दो भाई और तीन बहनों का परिवार था, जिनमें नाना जी सबसे छोटे थे। आगे नानाजी की देखरेख उनके मामा ने की थी। नानाजी किसी पर बोझ नहीं बनना चाहते थे, जिस वजह से वे खुद पैसे कमाने के लिए मेहनत करते थे। बचपन में उन्होंने सब्जी बेचने का भी काम किया था। नानाजी पैसे कमाने के लिए अपने घर से भी निकल जाया करते थे, फिर उन्हें जहाँ सहारा मिलता वही रह जाते थे। नानाजी ने तो कुछ समय मंदिर में भी रहकर गुजारा था।

3.1.3 शिक्षा- नानाजी को पढ़ने का बहुत शौक था। पैसों की कमी के बावजूद नानाजी की यह इच्छा कम नहीं हुई थी। नानाजी ने खुद मेहनत करके, यहाँ-वहां से पैसे जुटाए और अपनी शिक्षा को जारी रखा था. नानाजी ने हाई स्कूल की पढाई राजस्थान के सिकर जिले से की थी, यहाँ उनको पढाई के लिए छात्रवृत्ति भी मिली थी। इसी समय नानाजी की मुलाकात डॉक्टर हेडगेवार से हुई, जो स्वयंसेवक संघ के संस्थापक भी थे। इन्होंने नानाजी को संघ में शामिल होने के लिए प्रेरित किया, और रोजाना शाखा में आने का निमंत्रण भी दिया था। इसके बाद डॉक्टर हेडगेवार ने नानाजी को आगे कॉलेज की पढाई के लिए बिरला कॉलेज में जाने के लिए कहा। उस समय नानाजी के पास इतने पैसे नहीं थे, कि वे इस कॉलेज में दाखिला ले सकें। हेडगेवार जी ने उनको पैसों की मदद भी करनी चाही, लेकिन स्वाभिमानी नानाजी ने आदरपूर्ण तरीके से उन्हें इंकार कर दिया. इसके बाद नानाजी ने कुछ साल खुद मेहनत की और पैसे जमा किये। 1937 में नानाजी ने बिरला कॉलेज में दाखिला ले लिया। इसी दौरान नानाजी ने राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ (RSS) को भी ज्वाइन

किया और वे इससे जुड़े कार्यों में भी पूर्ण रूप से सक्रीय थे। 1939 में नानाजी ने संघ शिक्षा के लिए 1 साल का कोर्स किया।

3.2 राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ के मुख्य कार्यकर्ता-

- नानाजी अपना आदर्श लोकमान्य तिलक जी को मानते थे, वे उनकी राष्ट्रीय विचारधारा से अत्यधिक प्रभावित थे। 1940 के दौरान बहुत से युवा मुख्यरूप से महाराष्ट्र में नानाजी से प्रेरित होकर राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ में शामिल हो रहे थे. नानाजी ने सभों को देश सेवा के लिए अपने आप को समर्पित करने के लिए प्रेरित किया था।

- 1940 में नानाजी ने हेडगेवार जी की मृत्यु के बाद उत्तर प्रदेश का रुख किया। आगरा, गोरखपुर में उन्होंने प्रचारक के रूप में कार्य किया। यहाँ उनको संघ की विचारधारा को आम जनता तक पहुँचाने के लिए बहुत सी कठिनाइयों का सामना करना पड़ा था. उनके पास रोज के खर्चे के लिए भी पैसे नहीं हुआ करते थे, जहाँ वे रुकते थे, उन्हें तीन दिन बाद वहां से निकलने को कह दिया जाता था। कुछ समय बाद नानाजी ने एक बाबा के आश्रम में शरण ली, जहाँ उन्हें रहने तो मिला, लेकिन आश्रम के काम नानाजी ही करते थे, वे वहां खाना भी बनाया करते थे।

- 1943 तक नानाजी ने कड़ी मेहनत की, जिसका नतीजा यह रहा कि यूपी में 250 संघ शाखा बन गई थी। उत्तर प्रदेश में संघ के कार्य के दौरान ही नानाजी की मुलाकात राष्ट्रवादी विचारधारा रखने वाले महान नेता दीनदयाल उपाध्याय से हुई थी।

- 1947 में देश की आजादी के बाद आरएसएस ने भारत देश की आम जनता के बीच राष्ट्र की सही जानकारी पहुँचाने के लिए अपनी खुद की पत्रिका और समाचार पत्र प्रकाशित करने का विचार किया। उस समय संघ में दीनदयाल उपाध्याय जी के अलावा, अटल बिहारी बाजपेयी जैसे महान नेता भी उससे जुड़े हुए थे. संघ के उच्च अधिकारीयों ने संपादक का पद अटल जी को सौंपा. पुरे प्रबंध को देखने के लिए नानाजी के साथ दीनदयाल जी को चुना गया। पत्रिकाओं के नाम राष्ट्रधर्म एवं पांचजन्य था, जबकि समाचार पत्र स्वदेश नाम से प्रकाशित हुआ था।

- संघ को उस समय पैसों की बहुत तंगी थी, फिर भी किसी तरह प्रकाशन का कार्य पूरा किया रहा था। पत्रिका एवं समाचार पत्र के विषय बहुत मजबूत थे, राष्ट्रवादी सोच को बखूबी प्रस्तुत किया जा रहा था, जिसे भारत देश की जनता पसंद कर रही थी। कुछ ही समय में यह समाचार पत्र ने लोकप्रियता हासिल कर ली थी।

- इसी दौरान 1948 में गाँधी जी की हत्या कर दी गई थी। गाँधी जी के हत्यारे नाथूराम गोडसे को आरएसएस का आदमी कहा जा रहा था. जिसके चलते संघ के सभी कार्यों में प्रतिबंध लगा दिया गया था। नानाजी ने अपनी सूझ-बूझ से इसका तोड़ निकाला था, और प्रकाशन का कार्य जारी रखा था, ताकि आम जनता तक राष्ट्र से जुडी बातें पहुँच सकें।

3.3 नानाजी देशमुख का राजनैतिक सफ़र -

- 1950 के आते-आते आरएसएस से प्रतिबंध हट गया था, जिसके बाद संघ के लोगों ने भारतीय कांग्रेस के सामने खुद की पार्टी खड़ी करने का विचार किया। 1951 में श्यामा प्रसाद मुखर्जी ने संघ के साथ मिल कर भारतीय जन संघ की स्थापना की थी। यही आगे चलकर देश की सबसे बड़ी राजनैतिक पार्टी भारतीय जनता पार्टी बनी।

- उत्तर प्रदेश में पार्टी के प्रचारक के लिए नानाजी को चुना गया था। वे वहां महासचिव के रूप में कार्यरत थे. 1957 तक नानाजी ने यूपी के हर जिले में जाकर पार्टी का प्रचार किया। लोगों को पार्टी से जुड़ने का आग्रह किया, जिसके फलस्वरूप पुरे प्रदेश के हर जिले में पार्टी की इकाई खुल गई थी।

- उत्तरप्रदेश में भारतीय जन संघ (BJS) एक बड़ी राजनैतिक पार्टी बनकर उभरी थी. उत्तरप्रदेश के पूर्व मुख्यमंत्री चन्द्र भानु गुप्ता को प्रदेश के राजनैतिक युद्ध में देशमुख जी के नेतृत्व में बीजेएस से एक, दो नहीं बल्कि तीन बार बड़ी टक्कर दी थी। यह उत्तर प्रदेश के इतिहास में पहली बार था, जब कोई पार्टी कांग्रेस के सामने इतने बड़े रूप में खड़ी हो सकी थी। भारतीय जन संघ को यूपी में लोकप्रियता दिलाने का श्रेय अटल बिहारी बाजपेयी जी, दीनदयाल उपाध्याय जी एवं नानाजी को जाता है. तीनों की कड़ी मेहनत, दृष्टिकोण, कौशल से भारत की राजनीति में यह बड़ा फेरबदल हुआ था।

- नानाजी बहुत ही शांत और नम्र किस्म के इन्सान थे, वे सभी से बड़ी नम्रता से बात करते थे, फिर चाहे वो उनकी पार्टी का सदस्य हो या विपक्ष का कोई इंसान। यही वजह थी कि दूसरी पार्टी के लोग भी नानाजी के साथ बहुत ही आदर के साथ व्यवहार करते थे।

- नानाजी देशमुख ने विनोबा भावे द्वारा शुरू किये गए भू दान आन्दोलन में भी बढचढ कर हिस्सा लिया था।

- इंदिरा गाँधी जी की के समय जब देश में आपातकाल चल रहा था, तब देश की राजनीति में भी बहुत उठक पटक हुई थी. देशमुख जी ने इस दौरान अपनी समझ और हिम्मत का परिचय दिया था, जिसकी तारीफ़ बाद में बीजेएस के प्रधानमंत्री बने मुरारजी देसाई ने भी की थी।

- 1977 में नानाजी यूपी के बलरामपुर लोकसभा क्षेत्र से बीजेएस पार्टी की तरफ से चुनाव में उतरे थे, जहाँ एक बड़े मार्जिन के साथ उनको जीत हासिल हुई थी।

- 1980 में नानाजी ने राजनीति छोड़ कर सामाजिक और रचनात्मक कार्यों को करने का फैसला किया। इससे उनके चाहने वालों को बहुत दुःख हुआ था, लेकिन सभी ने उनके फैसले का सम्मान किया था।

- जब जनता पार्टी का गठन हुआ था, देशमुख इसके मुख्य वास्तुकारों में से एक थे। श्यामा प्रसाद मुखर्जी के साथ उन्होंने पार्टी के लिए रुपरेखा बनाई थी. कुछ ही सालों में आगे चलकर यही जनता पार्टी ने कांग्रेस को सत्ता से हटाकर, खुद देश की सरकार बना ली थी।

3.4 नानाजी देश्मुख द्वारा किये गए सामाजिक कार्य-

- राजनीति से सन्यास लेने के बाद नानाजी ने 1969 में दीनदयाल शोध संस्थान की स्थापना की थी, उनका उद्देश्य था कि यह संस्थान भारत को मजबूत बनाने के लिए कार्यरत रहे। राजनीति के बाद नानाजी ने अपना समय इसके निर्माण कार्य में ही लगा दिया था।

- नानाजी ने ग्राम में कृषि क्षेत्र को बढ़ाने, उससे जुडी सारी सुख सुविधाएँ को पहुँचाने के लिए कार्य किया था। गाँव में कुटीर उद्योग को बढ़ाने के लिए, वे ग्रामवासी को हमेशा सही शिक्षा दिया करते थे।

- इसके अलावा गाँव का पूरा विकास, लोगों की रोजमर्रा की जरूरतें जैसे ग्रामीण स्वास्थ्य, शिक्षा, बिजली, सड़क, पानी आदि के लिए भी बहुत मेहनत की थी।

- नानाजी ने मुख्यरूप से उत्तरप्रदेश, मध्यप्रदेश के लगभग 500 गाँव में बड़े-बड़े विकास कार्य किये थे।

- पहली बार जब नानाजी इस जगह पर गए, तो उन्हें वो बेहद अच्छी लगी, जिसके बाद उन्होंने अपने आगे के जीवन को यही बिताने का फैसला लिया था। 1969 में नानाजी ने रामभूमि चित्रकूट के विकास कार्य को करने का दृढ संकल्प ले लिया। उस समय चित्रकूट के हालात अच्छे नहीं थे, विकास के नाम पर राम की कर्मभूमि पर कुछ भी नहीं हुआ था।

- रामजी जब अपने वनवास काल में थे, तो उन्होंने 14 में से 12 साल इसी जगह में व्यतीत किये थे, उसी समय से उन्होंने दलितों के विकास के लिए काम शुरू किया था। नानाजी ने भी इस कार्य को आगे बढ़ाने का सोचा और चित्रकूट को अपने सामाजिक कार्यों का केंद्र बना दिया था।

- नानाजी ने गरीब से गरीब वर्ग को ऊँचा उठाने के लिए कार्य किये थे, वे समाज के पिछड़े वर्ग के उत्थान के लिए कार्यरत थे।

3.5 योगदान -

- भारत देश के प्रथम ग्रामीण विश्वविद्यालय की स्थापना चित्रकूट में नानाजी के द्वारा हुई थी। वे इस विश्वविद्यालय के कुलाधिपति भी थे।
- नानाजी देशमुख ने 'मंथन' नामक त्रैमासिक शोध-पत्रिका का प्रकाशन भी हिन्दी और अंग्रेजी में शुरू किया था।
- नानाजी ने भारत देश में शिक्षा को बढ़ावा देने के लिए बहुत से कार्य किये थे। वे शिक्षा को देश के विकास के लिए अत्यंत महत्वपूर्ण मानते थे। देश में सभी को आसानी से शिक्षा मिल सके, इसके लिए उन्होंने १९५० में उत्तर प्रदेश में देश का पहले स्वरस्वती शिशु मंदिर विद्यालय की स्थापना गोरखपुर में की थी।

3.6 नानाजी देशमुख की मृत्यु -

नानाजी देशमुख ने सन् २०१० में ९३ साल की उम्र में चित्रकूट स्थित भारत के पहले ग्रामीण विश्वविद्यालय (जिसकी स्थापना उन्होंने खुद की थी) में रहते हुए अन्तिम साँस ली। वे पिछले कुछ समय से बीमार थे, लेकिन इलाज के लिये दिल्ली जाने से मना कर दिया। नानाजी देश के पहले ऐसे व्यक्ति थे जिन्होंने अपना शरीर छात्रों के मेडिकल शोध हेतु दान करने का वसीयतनामा (इच्छा पत्र) मरने से काफी समय पूर्व १९९७ में ही लिखकर दे दिया था, जिसका सम्मान करते हुए उनका शव अखिल भारतीय आयुर्विज्ञान संस्थान नई दिल्ली को सौंप दिया गया।

3.7 प्रशंसा और सम्मान-

सन् २००५ में तत्कालीन उपराष्ट्रपति श्री भैरों सिंह शेखावत, नानाजी को ज्ञानेश्वर पुरकार से सम्मानित करते हुए वर्ष २०१९ में नानाजी को सर्वोच्च नागरिक पुरस्कार भारत रत्न से सम्मानित किया गया।

वर्ष १९९९ मेंनानाजी देशमुख को पद्म विभूषण से सम्मानित किया गया। तत्कालीन राष्ट्रपति ए.पी.जे. अब्दुल कलाम ने नानाजी देशमुख और उनके संगठन दीनदयाल शोध संस्थान की प्रशंसा की। इस संस्थान की मदद से सैकड़ों गाँवों को मुकदमा मुक्त विवाद सुलझाने का आदर्श बनाया गया। अब्दुल कलाम ने कहा-"चित्रकूट में मैंने नानाजी देशमुख और उनके साथियों से मुलाकात की।

चित्र 3.8 सन २००५ में तत्कालीन उपराष्ट्रपति श्री भैरों सिंह शेखावत, नानाजी को ज्ञानेश्वर पुरकार से सम्मानित करते हुए

दीनदयाल शोध संस्थान ग्रामीण विकास के प्रारूप को लागू करने वाला अनुपम संस्थान है। यह प्रारूप भारत के लिये सर्वथा उपयुक्त है। विकास कार्यों से अलग दीनदयाल उपाध्याय संस्थान विवाद-मुक्त समाज की स्थापना में भी मदद करता है। मैं समझता हूँ कि चित्रकूट के आसपास अस्सी गाँव मुकदमें बाजी से मुक्त है। इसके अलावा इन गाँवों के लोगों ने सर्वसम्मति से यह फैसला किया है कि किसी भी विवाद का हल करने के लिये वे अदालत नहीं जायेंगे। यह भी तय हुआ है कि सभी विवाद आपसी सहमति से सुलझा लिये जायेंगे। जैसा नानाजी देशमुख ने हमें बताया कि अगर लोग आपस में ही लड़ते झगड़ते रहेंगे तो विकास के लिये समय कहाँ बचेगा?" कलाम के मुताबिक, विकास के इस अनुपम प्रारूप को सामाजिक संगठनों, न्यायिक संगठनों और सरकार के माध्यम से देश के विभिन्न भागों में फैलाया जा सकता है। शोषितों और दलितों के उत्थान के लिये समर्पित नानाजी की प्रशंसा करते हुए कलाम ने कहा कि नानाजी चित्रकूट में जो कर रहे हैं उसे देखकर अन्य लोगों की भी आँखें खुलनी चाहिये।

चतुर्थ अध्याय

दीनदयाल शोध संस्थान का परिचयात्मक विवरण

4.1 दीनदयाल शोध संस्थान की स्थापना-

दीनदयाल शोध संस्थान नानाजी देशमुख द्वारा स्थापित एक ग्रामीण विकास संस्था है। इसकी स्थापना सन् १९७२ में की गयी थी। इसका मुख्यालय दिल्ली में है। इसका मुख्य उद्देश्य दीनदयाल उपाध्याय के विचारों को फलीभूत करना है।

इसके द्वारा सबसे पहले उत्तर प्रदेश के गोण्डा जिले के जयप्रभा ग्राम में सन् १९७८ में कार्य आरम्भ किया गया। गोंडा में कार्य की सफलता के बाद इसे अन्य राज्यों बिहार, मध्यप्रदेश (चित्रकूट), महाराष्ट्र आदि में इसका प्रसार किया गया।

चित्र - 4.9 दीनदयाल शोध संस्थान चित्रकूट

संस्थान के दिल्ली मुख्यालय में बहुत सी गतिविधियाँ चलायी जाती हैं। वहाँ एक पुस्तकालय है, सन्दर्भ प्रभाग है। वे लोग राष्ट्रीय महत्व के विषयों पर कार्यशालायें आयोजित करते हैं। विद्यार्थियों के लिये स्पर्धाएं आयोजित की जातीं हैं। भविष्य में सम्यक प्रौद्योगिकी अनुसंधान केन्द्र खोलने की योजना है।

4.2 संकल्प-

नानाजी देशमुख देश के युवाओं के समक्ष एक ऐसा अनुकरणीय मॉडल प्रस्तुत करना चाहते हैं जिससे प्रेरित होकर वे अपने प्रगति का मार्ग प्रशस्त कर सकें। राजनेताओं के माध्यम से देश का विकास विशेषकर ग्रामीण अंचलों का विकास सम्भव नहीं है। प्रत्येक व्यक्ति को स्वयं आगे आना पड़ेगा और अपने लिए स्वयं रास्ते का निर्माण करना पड़ेगा। नानाजी के शब्दों में – "पिछले कुछ समय के घटनाक्रम से मेरा यह विश्वास दृढ़ हो चला है कि राजनीति के भरोसे देश का विशेषकर गांव का विकास नहीं हो सकता। इसके लिए समाज को ही आगे आना होगा और समाज को ऊर्जा देने का काम सिर्फ युवा-वर्ग ही कर सकता है। मैं देश की तरुणाई का पुनः आह्वान करता हूं कि वह अपना उत्तरदायित्व समझें और गांडीव उठाये।"

इस प्रकार दीनदयाल शोध संस्थान का संकल्प युवा-वर्ग को इस प्रकार जागृत करता है कि वे अपने प्रगति का मार्ग स्वयं प्रशस्त कर सकें एवं देश मे युगानुकूल सामाजिक पुनर्रचना में अपना योगदान दे सकें नानाजी के कथन -"हम अपने लिए नहीं अपनों के लिए हैं, अपने वे हैं जो पीड़ित और उपेक्षित हैं।" को ही संस्थान में अपना संकल्प वाक्य बनाया है। इस संकल्प वाक्य में ही संस्थान का संकल्प दृष्टिगोचर होता है। पंडित दीनदयाल उपाध्याय प्रणीत एकात्म मानववाद दर्शन एवं गाँधी जी के रामराज्य की अवधारणा के आधार पर समाज का निर्माण कर ग्रामीण अंचलों का संतुलित विकास करते हुए राष्ट्र के समग्र विकास का संकल्प लेकर दीनदयाल शोध संस्थान सतत् कार्यशील है। इसी संकल्प को आधार मानकर संस्थान अपनी नीतियों का निर्धारण कर रहा है।

4.3 दीनदयाल शोध संस्थान का उद्देश्य-

इसका मुख्य उद्देश्य दीनदयाल उपाध्याय के विचारों को फलीभूत करना है। समाज जीवन के सभी पहलुओं पर जनता की पहल एवं पुरुषार्थ के आधार पर युगानुकूल सामाजिक पुनर्रचना का अनुकरणीय नमूना सामूहिक प्रयत्न से तैयार करना।

संक्षेप में संस्थान के उद्देश्यों को निम्न रूप में पंक्तिबद्ध किया जा सकता है-

1. पंडित दीनदयाल उपाध्याय प्रणीत एकात्म मानववाद दर्शन के आधार पर मानवीयता एवं समतामूलक युगानुकूलक सामाजिक पुनर्रचना करना।
2. गांधीजी के स्वराज्य एवं रामराज्य के आदर्शों के अनुरूप समाज का निर्माण करना।
3. देश के पिछड़े, गरीब एवं ग्रामीण अंचलों का संतुलित एवं सम्पूर्ण विकास करना।
4. विकास का अनुकरणीय मॉडल प्रस्तुत करना जिससे प्रेरित होकर लोग अपनी प्रगति का मार्ग प्रशस्त कर सकें।
5. शिक्षित समाज की रचना करना।
6. समाज को स्वावलम्बी बनाना।
7. चरित्रवान नैतिक एवं स्वस्थ समाज का निर्माण करना।
8. अशिक्षा, बेरोजगारी, बीमारी एवं गरीबी मिटाना।
9. स्वस्थ लोकतंत्र विकसित करना।
10. राष्ट्र एवं समाज के अनुकूल नागरिकों का निर्माण करना।
11. राष्ट्र की सभ्यता एवं संस्कृति का संरक्षण, संवर्धन एवं प्रसार करना।
12. प्रकृति का संरक्षण करना।
13. कृषि का विकास करना।
14. क्षमता एवं मानवीय मूलक विवाद मुक्त आदर्श समाज का निर्माण करना।

4.4 दृष्टि-

15 अगस्त 2020 तक 2025 स्वावलम्बी ग्राम।

4.5 गुणात्मक नीति-

जनता की पहल एवं पुरुषार्थ से गाँव स्वावलम्बी बनें जिसमें-

- कोई गरीब न रहे।
- कोई बेकार न रहे।
- कोई अशिक्षित न रहे।
- कोई बीमार न रहे।
- हरा-भरा और विवादमुक्त गाँव हो।

4.6 लक्ष्य-

संस्थान के प्रत्येक कार्य के मूल में मनुष्य ही है। संस्थान के सभी प्रकार की गतिविधियों के केन्द्र समाज है। इसका आधार एकात्म मानववाद है, जिसे महान विचारक पंडित दीनदयाल उपाध्याय ने प्रतिपादित किया था। संस्थान का मुख्य उद्देश्य ग्रामीण अंचल एवं वहाँ की पिछड़ी, गरीब और अशिक्षित जनता का युगानुकूल समग्र विकास करना है जिससे एक सर्वोदय समाज की रचना की जा सके। इस उद्देश्य के आधार पर संस्थान में अपने मुख्य कार्यस्थल चित्रकूट के ग्रामीण क्षेत्रों के लिए निम्नलिखित लक्ष्य निर्धारित किए हैं -

- शून्य बेरोजगारी
- शून्य गरीबी
- शून्य कुपोषण
- शून्य निरक्षरता
- शून्य मुक़दमेबाज़ी
- स्वच्छ हरा-भरा गाँव

वर्तमान में दीनदयाल शोध संस्थान का मुख्य कार्यस्थल चित्रकूट है। चित्रकूट मर्यादा पुरुषोत्तम भगवान राम की शरणस्थली, लोकनायक तुलसी की प्रेरणा स्थली तथा भारतीय संस्कृति एवं आध्यात्मिक जगत का आदि स्थल है। अपनी व्यापक रमणीयता और सौंदर्य सुषमा से परमानंद प्रदर्शन करने वाला पुण्यतीर्थ है। ऋषि-मुनियों की तो यह अनादिकाल से तप स्थली रहा है। यहीं पर भगवान राम ने 11 वर्ष व्यतीत कर इसे क्षेत्र को अमरत्व प्रदान किया। यह मध्य प्रदेश के सतना जिले एवं उत्तर प्रदेश के चित्रकूट जिले के अन्तर्गत आता है। अपने निर्धारित लक्ष्य को प्राप्त करने लिए संस्थान सतत् प्रयासरत है। संस्थान अपने मुख्य कार्यस्थल चित्रकूट के आसपास के 500 गाँव का **ग्रामीण पुनर्रचना** एवं **युगानुकूल नवरचना** के लिए चयन किया था। अधिकांश गाँव बहुत पिछड़े हैं। सड़क बिजली तो दूर की बात शिक्षा और चिकित्सा जैसी मूलभूत आवश्यकताओं का भी अभाव है। 2010 ई० तक सभी गाँव को स्वावलम्बी बनाने का लक्ष्य था।

इस प्रकार वर्तमान में दीनदयाल शोध संस्थान में चित्रकूट के आसपास के 2025 स्वावलम्बी ग्रामों को 2020 तक गरीबी, बेकारी, अशिक्षा, बीमारी एवं विवाद से मुक्त करने का लक्ष्य निर्धारित किया है। इस लक्ष्य को प्राप्त करने हेतु संस्थान अनेक गतिशील परियोजनायें संचालित कर रहा है। संस्थान को आशा है कि 15 अगस्त 2010 तक चित्रकूट प्रकल्प के चयनित 2025 ग्राम स्वावलम्बी हो जाएंगे तथा भारत एवं विश्व के लिए एक अनुकरणीय मॉडल प्रस्तुत करेंगे।

उसके बाद भारत के दूसरे भागों में भी इसे प्रतिपादित करना है जो की इन बिन्दुओं से प्राप्त होगी-

- शोध एवं परिष्करण।
- योजना एवं पद्धति का क्रियान्वयन।
- उपयुक्त तकनीकी की खोज एवं उसका प्रसार।
- सक्षम लोगों की पहल एवं प्रतिबद्धता।

4.7 नानाजी देशमुख के शैक्षिक विचार

राष्ट्रऋषि नानाजी ने शिक्षा के मौलिक एवं अभिनव परिकल्पना प्रस्तुत की है। नानाजी **'बाल शिक्षा'** को अत्यंत ही महत्वपूर्ण मानते थे। उनका कथन है कि **"जैसा बीज बचपन में बोया जाता है, वैसा ही जीवन के वृक्ष में**

फल लगता है। इसलिए बचपन में दी जाने वाली शिक्षा कॉलेज एवं विश्वविद्यालय में दी जाने वाली शिक्षा से अधिक महत्वपूर्ण है।" नानाजी का कहना था कि 21वीं सदी में शिक्षा ही विकास को निर्धारित करेगी। उन्होंने कहा कि शिक्षा प्रणाली ऐसी हो जो विद्यार्थियों में क्षमता पैदा करने वाली हो।

नानाजी शिक्षा को व्यावहारिक रूप प्रदान करना चाहते थे। शिक्षा के संदर्भ में उनका मन्तव्य था कि विश्वविद्यालयों से उपाधि पाकर या आजीविका की क्षमता अर्जित कर, स्वयं को शिक्षित मानना अपने आपको धोखा देना है। इससे तो मानव पशु समान आजीवन स्वार्थ पूर्ति में लगा रहता है। उन्होंने कहा कि वस्तुतः **शिक्षा का अर्थ है- मानव संतान को मानवीय गुणों से संपन्न करना।** इस सन्दर्भ में उनके द्वारा दिया गया उदाहरण दृष्टव्य है- **"रामराज्य में शिक्षा का लक्ष्य मानवीय गुणों का संवर्धन करना था, जीविकोपार्जन की क्षमता अर्जित करना मात्र नहीं। फलस्वरुप हर एक नागरिक का जीवन नैतिकता से परिपूर्ण था।"** नानाजी ने शिक्षा को निम्न प्रकार से परिभाषित किया है- **"मानव को स्वावलंबी, स्वाभिमानी किन्तु विनम्र तथा अन्य मानवीय गुणों से परिपूर्ण बनाने के लिए शिक्षाशास्त्र का जन्म हुआ है। शारीरिक, मानसिक, बौद्धिक एवं आध्यात्मिक विकास करना ही इसका शास्त्र का लक्ष्य है।"**

वस्तुतः नानाजी शिक्षा को एक ऐसे शास्त्र के रूप में देखते थे जो मनुष्य को विभिन्न मानवीय गुणों से परिपूर्ण बना सके। इन मानवीय गुणों की सूची में उन्होंने स्वावलंबन, स्वाभिमान तथा विनम्रता को सम्मिलित किया है। नानाजी शिक्षा के माध्यम से विद्यार्थी जीवन के विभिन्न पक्षों का विकास करना चाहते थे। अर्थात् विद्यार्थी के सर्वांगीण विकास को ही उन्होंने शिक्षा पद्धति का मर्म स्वीकार किया है। इस संदर्भ में उनका कथन है कि **"शारीरिक एवं आत्मिक तत्वों की परस्पर प्रतिकूलता में सामंजस्य निर्माण करने के लिए ही मनुष्य को शिक्षण की आवश्यकता होती है।"** नानाजी का विश्वास था कि शिक्षा व्यक्ति को समाज में रहने योग्य बनाती है। शिक्षा की व्यवस्था जैसी होगी बच्चों का मानसिक विकास भी वैसा ही होगा। समाज को सुसंस्कृत बनाने हेतु शिक्षा में गुणवत्ता होना आवश्यक है।

नानाजी शिक्षा का एक ऐसा ढांचा खड़ा करना चाहते थे जो पूरी तरह से ग्रामीण भारत की आवश्यकताओं के अनुरूप कार्य करते हुए सामाजिक पुनर्रचना एवं ग्रामीण भारत की चुनौतियों का सम्यक समाधान प्रस्तुत कर सके। नानाजी ने शिक्षा पद्धति के मर्म को स्पष्ट करते हुए कहा है कि वर्तमान ग्रामीण भारत की चुनौतियां एवं छात्र के सर्वांगीण विकास हेतु तथा अर्थपूर्ण सामाजिक पुनर्रचना के सार्थक प्रयास को सफल बनाने वाली की शिक्षा पद्धति ही आज की हमारी आवश्यकता है।

वर्तमान भारतीय संदर्भ में यदि प्रासंगिकता को समझना है तो उनके द्वारा निर्धारित शिक्षा के पाठ्यक्रम शिक्षण विधियां तथा विद्यालयों को भी समझना होगा।

4.7.1 शिक्षा के उद्देश्य-

भारतीय परिप्रेक्ष्य में शिक्षा की व्यापक संकल्पना को दृष्टिगत रखते हुए नानाजी देशमुख ने शिक्षा के उद्देश्यों की परिकल्पना की, उनके आधार पर शिक्षा की अवधारणा को समझा जा सकता है। अतः नानाजी देशमुख के अनुसार शिक्षा के निम्नांकित उद्देश्य हैं-
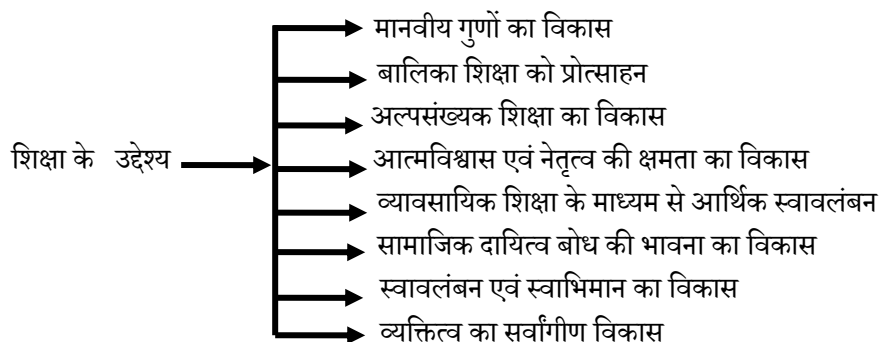
4.7.2 पाठ्यक्रम-

नानाजी के अनुसार पाठ्यक्रम ऐसा होना चाहिए जिससे छात्र का न केवल बौद्धिक विकास हो बल्कि छात्र का सामाजिक एवं नैतिक विकास भी किया जा सके। बौद्धिक विकास को केवल साहित्यिक विषयों से भी हो सकता है किंतु उनसे शारीरिक एवं आध्यात्मिक विकास सम्भव नहीं होता है। प्रचलित शिक्षा में शारीरिक एवं आध्यात्मिक विकास की उपेक्षा की गयी है। नानाजी मन्तव्य था कि यदि पाठ्यक्रम में **'शिल्प'** को केंद्रीय स्थान दिया जाए तो प्रचलित शिक्षा के दोष दूर हो सकते हैं। उन्होंने सिर्फ प्रधान पाठ्यक्रम पर जोर दिया है।

अतः नानाजी ने पाठ्यक्रम में **'क्राफ्ट'** को केंद्रीय स्थान दिया है। क्राफ्ट कोई भी हो सकता है। भारतीय समाज की दृष्टि से कृषि, कताई-बुनाई, लकड़ी का काम, धातु का काम आदि में से एक क्राफ्ट को चुना जा सकता है।

दीनदयाल शोध संस्थान द्वारा संचालित जन शिक्षण संस्थान चित्रकूट, बीड एवं गोंडा का प्रशिक्षण सह उत्पादन केंद्र अपने उद्देश्यों पर खरे उतरे हैं। ''जनशिक्षण संस्थान चित्रकूट द्वारा वर्तमान में 55 प्रकार के व्यवसायिक पाठ्यक्रम संचालित किए जा रहे हैं। वहां से अभी तक सात हजार से ज्यादा लोग प्रशिक्षित होकर स्वरोजगार शुरू कर चुके हैं। प्रशिक्षण अवधि के दौरान प्रशिक्षणार्थियों को व्यवसाय विशेष की जानकारी देने के साथ **जनसंख्या नियंत्रण, प्रदूषण, उद्यमिता विकास** जैसे राष्ट्रीय और सामाजिक महत्व के विषयों पर भी जानकारी दी जाती है।

4.7.3 शिक्षण विधियाँ-

नानाजी का मानना था कि प्रशिक्षण में अध्यापक एवं छात्र में कोई सम्पर्क नहीं रहता है। अध्यापक व्याख्यान देकर चला जाता है तथा छात्र निष्क्रिय श्रोता के रूप में बैठे रहते हैं। इस प्रकार की दोषपूर्ण शिक्षा पद्धति के विपरीत नानाजी ऐसी शिक्षण पद्धति को लाना चाहते थे जिसमें छात्र और शिक्षक के मध्य अंतःक्रिया के स्तर को बढ़ाया जा सके और छात्र निष्क्रिय श्रोता के रूप में न रहकर सकरी अनुसंधानकर्ता, निरीक्षणकर्ता एवं प्रयोगकर्ता के रूप में हो। उनका कहना था कि शिक्षण पुस्तकीय न होकर शिल्प केंद्रित होना चाहिए। शिल्प को वे केवल मनोरंजन का साधन मानते थे। इस प्रकार नानाजी निम्नांकित शिक्षण विधियों के पक्षधर थे-

नागपुर का **'बाल जगत'** एवं चित्रकूट की **'नन्हीं दुनिया'** खेल पद्धति द्वारा शिक्षण के अच्छे उदाहरण हैं।
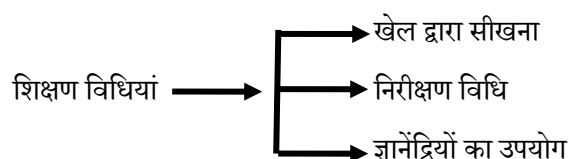
4.7.4 शिक्षक की परिकल्पना-

नानाजी के देशज शैक्षिक चिन्तन में जिस बिंदु पर सर्वाधिक जोर है वह है **शिक्षक।** नानाजी ने कहा कि ''समाज में शिक्षक की भूमिका हनुमान की तरह है। यदि वह चाह ले तो समाज को धरातल से ऊंचाई पर ले जा सकता है, परन्तु समाज के इस शिल्पी की ताकत को न समाज तौल पा रहा है और न स्वयं शिक्षक अपनी शक्ति को पहचान पा रहा है। इसलिए शिक्षक की भूमिका सिमटती जा रही है। नानाजी कहते थे कि समाज निर्माण में शिक्षकों को अहम भूमिका निभाने की आवश्यकता है। शिक्षकों पर बहुत बड़ी जिम्मेदारी है। उसका निर्वहन उन्हें बहुत ही सूझबूझ और समझदारी से करना होगा, तभी हम अच्छे समाज का निर्माण कर पाएंगे।''

''वर्तमान काल में शिक्षकगण जब तक परम्परागत दायित्वों का निर्वहन नहीं करेंगे तब तक समाज में सामाजिक जीवन का स्पंदन नहीं होगा। नई पीढ़ी में देशभक्ति की भावना अंकुरित नहीं होगी। वस्तुतः अध्यापन में संलग्न महिला पुरुष सही अर्थों में राष्ट्र निर्माता हैं।''

4.7.5 विद्यालय-

नानाजी का मत था कि संस्कारित शिक्षा पद्धति के माध्यम से की जा सकती है। गुरुकुल नगर से दूर प्रकृति की सुरम्य वातावरण में होने चाहिए, जहां पर गुरु-शिष्य एक साथ रहकर पठन-पाठन का कार्य करें। इससे दोनों के संबंध मधुर होंगे, शैक्षिक वातावरण का विकास होगा साथ ही समाज में सहजीवन का संचार होगा।

पंचम अध्याय

दीनदयाल शोध संस्थान के शैक्षिक प्रकल्प

पंडित दीनदायल उपाध्याय के 'एकात्म मानववाद' के दर्शन को व्यावहारिक धरातल पर उतारने के लिए माननीय नानाजी देशमुख ने सामाजिक-आर्थिक पुनर्रचना की प्रयोगशाला के तौर पर दीनदयाल शोध संस्थान की स्थापना की। परमपूजनीय श्री गुरुजी द्वारा 20 अगस्त 1972 को दिल्ली में संस्थान का उद्घाटन हुआ। दीनदयाल शोध संस्थान ने ग्रामीण विकास के अनुकरणीय नमूने विकसित किये हैं और सफलतापूर्वक चलाए हैं। इसमें शिक्षा, स्वास्थ्य, स्वावलम्बन, गोवंश संवर्धन और कृषि विकास के प्रकल्प शामिल हैं।

एक द्रष्टि इन प्रकल्पों पर -

5.1 दिल्ली परियोजना :-

पं दीनदायल उपाध्याय द्वारा प्रणीत एकात्म मानववाद भारतीय दर्शन की ऐसी अवधारणा है जो मनुष्य और समाज के संबंधों की परस्परानुकूलता को स्थापित करती है। इस दर्शन में भारत को स्वावलंबी और सहृदय देश के रूप में स्थापित करके भारत को विश्व का नेता बनाने की क्षमता है। दिल्ली स्थित दीनदयाल शोध संस्थान दीनदयाल जी के इसी मिशन को पूरा करने का सामाजिक अनुसंधान एवं अनुप्रयोग केंद्र है।

5.2 गोंडा ग्रामोदय परियोजना :-

1978 में जयप्रभा ग्राम में शुरू हुई गोंडा ग्रामोदय परियोजना एकीकृत ग्रामीण विकास में एक अनूठा प्रयोग है। इसमें 'लोगों की पहल और भागीदारी के साथ समग्र विकास के माध्यम से पूर्ण परिवर्तन' के प्रकल्प शुरू किये गये।

5.2.1 रामनाथ आरोग्यधाम :- जयप्रभा ग्राम में स्थित आयुर्वेद आधारित रामनाथ आरोग्यधाम ग्रामीण क्षेत्रों में स्वास्थ्य की सुविधा दे रहा है। यहां आधुनिक नेत्र चिकित्सा इकाई, फार्मेसी तथा मातृ-शिशु कल्याण केंद्र भी कार्यरत है।

5.2.2 कृषि विज्ञान केन्द्र, गोपालग्राम :- आई.सी.ए.आर. की मदद से स्थापित यह केन्द्र विभिन्न क्षेत्रों में प्रशिक्षण देकर कृषि एवं गैर कृषि आय बढ़ाने में गोंडा जिले में ग्रामीणों की सहायता करता है।

5.2.3 जन शिक्षण संस्थान :- युवाओं को स्वावलम्बन के लिए विभिन्न व्यवसायों का प्रशिक्षण देता है।

5.2.4 दीनदयाल औद्योगिक प्रशिक्षण केन्द्र :- गोंडा शहर में गांधी पार्क में स्थित है केन्द्र विभिन्न ट्रेड में रोजगार परक प्रशिक्षण उपलब्ध कराता है।

5.2.5 चिन्मय ग्रामोदय विद्यालय :- ग्रामीण क्षेत्र के 1600 से अधिक लड़के लड़कियों को स्कूल की शिक्षा प्रदान करता है।

5.2.6 थारू विकास केन्द्र, इमिलिया कोडर :- बलरामपुर जिले में थारू बहुल क्षेत्र में इस परियोजना के तहत निम्न प्रकार को कार्यरत हैं।

5.2.6.1 जयहनुमान छात्रावास :- इमिलिहा कोडर में जनजाति क्षेत्र के बच्चों को शिक्षा एवं आवास सुविधाएं प्रदान करता है।

5.2.6.2 महाराणा प्रताप ग्रामोदय विद्या मंदिर :- थारू बहुल इमलिया कोडर में स्थित यह विद्यालय दसवीं तक की शिक्षा उपलब्ध कराता है।

5.2.6.3 भक्तिधाम :- थारू बहुल इमलिया कोडर में स्थित यह विद्यालय दसवीं तक की शिक्षा उपलब्ध कराता है।

5.3 बीड़ परियोजना :-

1987 से संस्थान की गतिविधि का केंद्र महाराष्ट्र के बीड़ जिले में है; जहां साल भर जलाभाव रहता है। संस्थान ने पानी के संरक्षण, जल ग्रहण, वृक्षारोपण और वर्षा बढ़ाने की योजनाएं चलाई हैं।

5.3.1 कृषि विज्ञान केन्द्र, अम्बाजोगाई :- 1992 से कृषि एवं गैर कृषि आय बढ़ाने के लिए कृषकों की सहायता कर रहा है।

5.3.2 जन शिक्षण संस्थान :- बीड नगर में स्थित यह केंद्र स्वरोजगार हेतु युवाओं को व्यवसायिक प्रशिक्षण प्रदान करने का केंद्र है।

5.3.3 गोकुल शिशु वाटिका एवं पालनाघर :- बीड़ नगर में स्थित यह केंद्र छोटे बच्चों के व्यक्तित्व विकास एवं आरंभिक शिक्षण का कार्य करता है।

5.4 नागपुर परियोजना :-

5.4.1 बाल जगत :- बच्चों के विकास पर नाना जी ने नागपुर में 'बाल जगत' की स्थापना की। यह फरवरी, 1991 में शुरू हुआ। संगीत, ललित कला, योग, व्यक्तित्व विकास, नाटक आदि के माध्यम से बच्चों की प्रतिभा निखारने का यह एक अनौपचारिक केंद्र है। यहां आधुनिक पार्कों और आधुनिक उपकरणों की सुविधाएं हैं।

5.5 चित्रकूट परियोजना :-

गोंडा, बीड़ और नागपुर परियोजनाओं से प्राप्त अनुभवों के आधार पर प्रभु राम की तपोस्थली चित्रकूट में इस परियोजना का सूत्रपात्र हुआ। यह सामाजिक पुनर्निर्माण के क्षेत्र में एक चुनौतीपूर्ण सफलतम प्रयोग है। मध्य प्रदेश एवं उत्तर प्रदेश की सीमा पर बसा चित्रकूट प्राकृतिक संसाधनों से परिपूर्ण होते हुए भी पिछड़ा था। यहां जनजातियों और दलितों के उत्थान के प्रकल्प माननीय नानाजी देशमुख ने शुरू किए। चित्रकूट परियोजना एवं स्वावलंबन अभियान है, जो पंडित दीनदयाल उपाध्याय जी के 'एकात्म मानवदर्शन' पर आधारित ग्रामीण भारत के विकास का एकीकृत एवं समग्र मॉडल है।

5.5.1 स्वावलम्बन अभियान :- 500 से भी अधिक ग्राम आबादियों में समाज शिल्पी दम्पतियों के माध्यम से, ग्रामीणों की सहभागिता से संपूर्ण विकास के कार्यक्रम चलाए गए। इसमें शिक्षा, स्वास्थ्य, स्वाबलंबन और सामाजिक समरसता के प्रकल्प शामिल हैं। चित्रकूट परियोजना एक स्वावलम्बन अभियान हैं जो पंडित दीनदयाल उपाध्याय के "एकात्म मानवदर्शन" पर आधारित हैं।

5.5.2 आरोग्यधाम :- यह आयुर्वेद और प्राकृतिक चिकित्सा का महत्वपूर्ण केंद्र है। यहां आधुनिक नैदानिक उपकरण, प्रसूति एवं बाल केंद्र, ऑपरेशन थिएटर, योग एवं ध्यान केंद्र, प्राकृतिक चिकित्सा केंद्र, आयुर्वेद रिसर्च सेंटर, दंत चिकित्सा इकाई, औषधि उद्यान, हर्बल उपचार किट आदि सुविधाएं हैं।

आयुर्वेद, योग-विज्ञान एवं प्राकृतिक विधियों के संयुक्त प्रयासों द्वारा आजीवन स्वास्थ्य की विधियाँ विकसित करने का कार्य आरोग्यधाम में किया जा रहा है। व्यक्तिगत स्वास्थ्य, पारिवारिक स्वास्थ्य एवं सम्पूर्ण आबादी (समाज) के स्वास्थ्य के प्रशिक्षण का प्रबंध आरोग्यधाम में किया जा रहा है।

5.5.3 रसशाला :- स्थानीय लोगों की मदद से स्थानीय स्तर पर उपलब्ध संसाधनों से 250 प्रकार की दवाओं का उत्पादन होता है।

5.5.4 कृषि विज्ञान केन्द्र, मझगवां :- किसानों की कृषि एवं गैर कृषि आय में बढ़ोतरी एवं विभिन्न प्रशिक्षण के माध्यम से स्वावलंबन का लक्ष्य पूर्ण करता है।

5.5.5 कृष्णा देवी वनवासी बालिका आवासीय विद्यालय :- मझगवां स्थित वनवासी वर्ग की बालिकाओं हेतु आठवीं कक्षा तक का आवासीय विद्यालय है। वर्तमान में 120 बालिकाएं अध्ययनरत हैं।

5.5.6 कृषि विज्ञान केन्द्र, गनीवां :- आत्मनिर्भरता, जल-प्रबंधन के अभियानों से किसानों की कृषि एवं गैर कृषि आय में बढ़ोतरी का लक्ष्य पूरा करता है।

5.5.7 परमानन्द आश्रम पद्धति विद्यालय :- गनीवां, चित्रकूट (उत्तर प्रदेश) में स्थित अनुसूचित जाति के बच्चों के लिए सह शिक्षा एवं आवासीय सुविधा।

5.5.8 जन शिक्षण संस्थान :- गनीवां, चित्रकूट (उत्तर प्रदेश) में स्थापित यह संस्थान स्वरोजगार हेतु युवाओं के लिए व्यावसायिक प्रशिक्षण प्रदान करता है।

5.5.9 उद्यमिता विद्यापीठ :- यह प्रशिक्षण एवं उत्पादन केन्द्र है जहां 19 से अधिक औद्योगिक प्रशिक्षण शेड और 4 हॉस्टल हैं। सैकड़ों युवाओं को यहां प्रशिक्षण देकर आत्मनिर्भर बनाया गया है।

5.5.10 ग्रामोदय दर्शन :- यह ग्रामीण विकास में नवीन पहलों और प्रयोगों की स्थायी प्रदर्शनी है।

5.5.10.1 सुरेन्द्रपाल ग्रामोदय विद्यालय :- प्राथमिक और उच्च शिक्षा की एक विस्तृत योजना जिसके तहत 1500 छात्र एवं छात्राएं विद्यार्जन कर रहे हैं।

5.5.10.2 ग्रामोदय विश्वविद्यालय की स्थापना :- (MGCGV) मध्य प्रदेश के सतना जिले में मन्दाकिनी नदी के किनारे चित्रकूट में स्थित है। इसकी स्थापना का मुख्य उद्देश्य महात्मा गांधी के ग्रामीण विकास के स्वप्न को साकार कर ग्राम स्वराज्य की स्थापना है। अतः सम्यक तकनीक की शिक्षा और इसका प्रसार करना इसका मुख्य लक्ष्य है। इसकी स्थापना 12 फरवरी 1991 को महाशिवरात्रि के दिन मध्य प्रदेश सरकार के अधिनियम (9,1991) के द्वारा हुई।

5.5.11 रामनाथ आश्रमशाला :- चित्रकूट मध्य प्रदेश में स्थित 300 आदिवासी बच्चों के लिए आवासीय शिक्षा आवासीय विद्यालय।

5.5.12 गुरुकुल संकुल :- प्रेरणादायक वातावरण में मूल्याधारित शिक्षा का प्रबंध। इस परिसर का प्रबंधन सेवानिवृत्त दम्पति द्वारा होता है।

5.5.13 रामदर्शन :- भगवान राम के जीवन से जुड़ी झलकियां जो मानव विकास के सांस्कृतिक एवं एकात्म विकास को दर्शाती है।

5.5.14 गोवंश विकास एवं अनुसंधान केन्द्र :- शुद्ध भारतीय नस्ल की गायों के संरक्षण के लिए कई कार्यक्रम चलाए जाते हैं।

5.5.15 दिशा दर्शन केन्द्र :- समाज शिल्पी दम्पतियों द्वारा किए जा रहे कार्यों का यहां रिकॉर्ड रखा जाता है।

5.5.16 शैक्षणिक अनुसंधान केन्द्र :- स्थानीय तौर पर उपलब्ध संसाधनों के प्रयोग से वैज्ञानिक शिक्षा को बढ़ावा और नवीनतम शैक्षणिक उपकरणों का आविष्कार इस केंद्र की विशेषता है।

5.5.17 रामनाथ गोयनका स्मारक :-यहां यात्रा कार्यक्रमों के प्रबंधन एवं समन्वय का कार्य होता है।

5.5.18 दादी माँ का बटुआ :- पुरातन काल में मामूली बीमारियों का इलाज घर में ही हुआ करता था। घर की दादी माँ अपने बटुए से अनुभवसिद्ध दवा निकालकर छोटी-छोटी बीमारियों का इलाज किया करती थी। आरोग्यधाम ने उसी आधार पर **दादी माँ का बटुआ** बनाया है। अपनी ही रसशाला में जड़ी-बूटियों पर आधारित 33 दवाओं का निर्माण किया है। गाँव में ये दवाएं बहुत गुणकारी सिद्ध हो रही है। उपलब्ध जड़ी-बूटियों के द्वारा निर्मित ये दवाएं बहुत सस्ती हैं। गाँव-गाँव के लोग इस बटुए की दवाओं को पसंद कर रहे हैं। इन दवाओं के उपयोग की विधियों का विवरण सरल भाषा में बड़े अक्षरों में लिखकर इस बटुए में रखा रहता है। इस बटुए के कारण ग्रामवासियों को अब रोगों के उपचार के लिए किसी और जगह जाकर अधिक खर्च करने की जरूरत नहीं रही। गरीब से गरीब रोगी को भी अब बिना इलाज के कष्ट सहना नहीं पड़ता। गाँव के ही समाजसेवी वृत्ति के प्रौढ़ व्यक्ति को इन दवाओं के उपयोग का प्रशिक्षण दिया जाता है। वहीं गाँव में बीमार व्यक्तियों का प्राथमिक इलाज करता है। पुरानी और गंभीर बीमारी पीड़ित व्यक्ति को चित्रकूट के आरोग्य में उपचार के लिए पहुंचाने की व्यवस्था है।

5.5.19 समाज शिल्पी योजना :- दीनदयाल शोध संस्थान राष्ट्र विकास के लिए ग्राम विकास को आधार माना है। ग्राम, समाज एवं राष्ट्र की धुरी है। यदि इनका उचित विकास नहीं हुआ तो राष्ट्र को विकसित राष्ट्र के रूप में देखने का सुनहरा स्वप्न कभी पूरा नहीं हो सकता है। संस्थान ने ग्रामीण विकास एवं पुनर्रचना के लिए एक निश्चित कार्य योजना निर्मित की है। ग्रामीण विकास के लिए संस्थान में जो मानक माने हैं वे हैं - ग्रामीण स्तर पर -

- शून्य बेरोजगारी
- शून्य गरीबी
- शून्य कुपोषण
- शून्य निरक्षरता
- शून्य मुकदमेबाजी
- स्वच्छ हरा-भरा गाँव

इस मानक बिन्दुओं को प्राप्त करने के लिए संस्थान में कई कार्यक्रम एवं कार्य योजनाये निर्मित की है। संस्थान विकास की प्रक्रिया से निचले स्तर से ऊपर तक ले जाने के लिए प्रयासरत है। निचले ग्रामीण स्तर पर विकास के लिए संस्थान का मानना है कि ग्रामीणों से संवाद स्थापित कर उनकी समस्याओं को समझा जाए एवं उन्हें उन समस्याओं से स्वयं निपटने हेतु प्रेरित किया जाये। पहले भी ऐसे प्रयास हो चुके हैं अनेक समाजसेवी संगठनों के द्वारा। लेकिन उनके आत्मविश्वास को जगाने एवं उनका विश्वास जगाने का केवल एक ही तरीका है समाज सेवक के बीच रात-दिन उनकी जीवन शैली में रहकर उनके विकास हेतु कार्य करें।

संस्थान ने इस मूलभूत वास्तविकता को अनुभव किया और समाज के निचले स्तर के लिए कार्य करने वाले कार्यकर्ताओं के समूह को तैयार किया है जो शहर की समस्त सुविधाओं से दूर रहकर ग्रामीणों के बीच रहकर उनके विकास हेतु सतत् कार्यरत हैं। संस्थान की योजना 'समाज शिल्पी दम्पति' योजना के नाम से जानी जाती है। समाज शिल्पी दम्पति के रूप में नवविवाहित दम्पतियों का चयन किया जाता है जो सामाजिक सेवाओं के प्रति समर्पण का भाव रखते हैं। समाज शिल्पी दम्पति शैक्षिक रूप से कम से कम स्नातक होते हैं उनकी आयु 35 वर्ष से कम होनी चाहिए। ग्रामोदय से राष्ट्रोदय के अभिनव प्रयोग के लिए नानाजी ने 1996 में स्नातक युवा दम्पतियों से 5 वर्ष का समय देने का आह्वान किया था। पति-पत्नी दोनों कम से कम स्नातक आयु 35 वर्ष से कम हो, तब तक 2 से अधिक बच्चे न हों। दूर-दूर के प्रदेशों से प्रतिवर्ष ऐसे दम्पति पहुँचने लगे। चयनित दम्पति चित्रकूट पहुँचने लगे। चयनित दम्पत्तियों को 15-20 दिनों का प्रशिक्षण दिया जाता है। प्रशिक्षण के दौरान नानाजी का मार्मिक मार्गदर्शन मिलता है।

स्त्री समुदाय की सक्रिय भागीदारी के बिना पुरुष अकेले राष्ट्र निर्माण के कार्य में सफल नहीं हो सकते हैं। सामाजिक ढाँचे की मजबूती के लिए महिला और पुरुष रूपी तो स्तम्भ बराबर महत्व के होते हैं। उनके अधिकारों और भूमिका में किसी प्रकार के असंतुलन से देश के सांस्कृतिक ताने-बाने के खण्ड-खण्ड होने का भय खड़ा हो सकता है। देश के विकास में स्त्री-पुरुष विभेद की मानसिकता घातक है। व्यक्ति परिवार और समाज के वास्ते उनका जीवन एक-

दूसरे के पूरक होना ही चाहिए। चित्रकूट दीनदयाल शोध संस्थान की गाँव विकास की समाज शिल्पी योजना के पीछे यही दर्शन कार्यरत है। यह दर्शन एकात्म मानववाद से उपजा है जो संस्थान का निर्देशक सिद्धांत भी है जिसका मत है कि परिवार ही समाज का केन्द्र है।

इस प्रकार संस्थान द्वारा नियुक्त समाज शिल्पी दम्पति संस्थान की सभी योजनाओं को भलीभूत होने में अपना योगदान दे रहे हैं। परिवर्तन हेतु उत्प्रेरक के रूप में ये दम्पति संस्थान के स्वावलम्बन अभियान को गति प्रदान कर रहे हैं। इन ग्रामीण क्षेत्रों में, जहाँ संस्थान द्वारा नियुक्त समाज शिल्पी दम्पति कार्य कर रहे हैं, ग्रामीणों में बेरोजगारी दूर हो रही है, आय में वृद्धि हो रही है, कृषि तकनीकों में सुधार हो रहा है, शिक्षा, स्वास्थ्य एवं हरियाली युक्त गाँव हो रहे हैं। अब ग्रामीण आपसी विवादों का निपटारा स्वयं करने में सक्षम हो रहे हैं। सामाजिक रूप से ग्रामीण जागरूक हो रहे हैं। संस्थान के स्वावलम्बन अभियान की सफलता समाज शिल्पी दम्पति पूर्णतया निर्भर करती है। समाज शिल्पी दम्पति जैसा कि इनका नाम है समाज को नवीन युगानुकूल आवश्यकता के अनुरूप अपने शिल्प कौशल से नवीन रूप प्रदान कर रहे हैं। इनकी इस महत्वपूर्ण भूमिकाओं को देखते हुए उन्हें 'चेंज एजेंट' की संज्ञा से विभूषित किया गया है।

इस योजना का विचार देने वाले नानाजी देशमुख का कहना है कि किसी परिवार या समाज का निर्माण पुरुष या स्त्री अलग-अलग रहकर नहीं कर सकते हैं बल्कि यह दोनों की आपसी समझदारी से होता है। समाज में कोई भी अभियान क्यों न चला लिया जाए, यदि वह इस तथ्य की अनदेखी करता है तो अपना लक्ष्य पाने में सफल नहीं होगा। अन्य अभियानों के लिए भी उतना ही सत्य है। दुर्भाग्य से इस तथ्य की हमेशा अनदेखी की गई है। इसलिए इसके क्रियान्वयन एवं प्रचार-प्रसार का केवल एक ही उपाय है कि नवदम्पति सामाजिक विकास में अपना योगदान दें। इसी आधार पर समाज शिल्पी योजना बनाई गई। इस योजना की नींव 1996 में 11 नवविवाहित दम्पतियों की सहभागिता से रखी गई।

चित्रकूट को एक प्रयोगशाला के तौर पर इस योजना के लिए चुना गया था। 500 गाँव इस कार्य के लिए चुने गये। पाँच-पाँच गाँव का एक-एक समूह बनाया गया। इस पाँचों गाँवव के केन्द्र में समर्पित स्नातक नवविवाहित दम्पति को पर्याप्त प्रशिक्षण देने के बाद कामकाज का जिम्मा सौंपा गया। इस जोड़े को समाज शिल्पी दम्पति का नाम दिया गया। इन दम्पतियों को चित्रकूट के आस-पास चुनी हुई ग्रामीण बस्तियों में कम से कम 5 साल का समय देना होता है। इन सालों में दम्पति को गाँव और गाँव वालों को आर्थिक और सामाजिक रूप से आत्मनिर्भर बनाने की जिम्मेदारी सौंपी जाती है। यहाँ सामाजिक जीवन से तात्पर्य सामाजिक, आर्थिक, प्रशासनिक, सांस्कृतिक गतिविधियों, कला व सहनशीलता की समग्रता से है। "उनके ऊपर चित्रकूट की सभी योजनाओं (इसमें आरोग्यधाम, शिक्षा, शोध केन्द्र, कृषि विज्ञान केन्द्र और उद्यमिता विद्यापीठ की गतिविधियाँ शामिल हैं) के क्रियान्वयन की जिम्मेदारी है।" इसके अतिरिक्त गाँव को आत्मनिर्भर बनाने के काम में उनको सरकारी और गैर सरकारी संगठनों की सहायता दिलाने में भी अपना योगदान देते हैं। समाज शिल्पी दम्पति को सामान्यतः 5 गाँव की बस्ती में 5 साल कार्य करना होता है। यह उसका कार्यक्षेत्र है। इससे अलग हटकर वे स्थानीय जनों को अपने गाँव के लिए कुछ करने के लिए प्रेरित करने के साथ ही गाँव और दीनदयाल शोध संस्थान के बीच एक सेतु का कार्य करते हैं।

पाँच गाँव के एक समूह में एक समाज शिल्पी दम्पति को नियुक्त किया जाता है। समाज शिल्पी दम्पति को ग्राम वासियों के बीच गागाँव में ही रहना पड़ता है। समाज शिल्पी दम्पति के रहने,खाने की व्यवस्था संस्थान की ओर से होती है। ये दम्पति संस्थान का प्रतिनिधि होता है जो संस्थान के द्वारा संचालित की जा रही समस्त योजनाओं को गति प्रदान करता है। दीनदयाल शोध संस्थान के युगानुकूल सामाजिक एवं ग्रामीण पुनर्रचना अभियान की धुरी के रूप में समाज शिल्पी दम्पति कार्य करते हैं। इनके ऊपर ही एकात्ममानववाद दर्शन के आधार पर मानवीयता समाज की स्थापना का दायित्व है।

ये **समाज शिल्पी दम्पति** ग्रामवासियों के बीच रहकर अपने अनुकरणीय व्यवहार से ग्रामवासियों के बीच अपना स्थान एवं सम्मान बनाते हैं। ग्रामवासियों में चेतना का संचार करते हुए उन्हें स्वस्थ वातावरण निर्मित करने में सहायता प्रदान करते हैं। "गाँव में रहकर शिक्षा, स्वास्थ्य, स्वावलम्बन की अलख जगाते हैं। हर समय ग्रामवासिनी भारत माता को स्वर्ग बनाने के संकल्प लेते हैं।" प्रारम्भ में गाँव वालों को लगता है कि ये पढ़े-लिखे युवक-युवती हमारे गाँव

की खाक क्यों छान रहे हैं? लेकिन कुछ समय बाद उनके व्यवहार और कार्यों को देख कर उनके कायल हो जाते हैं। अनजानापन पारिवारिक निकटता में बदल जाता है और यहीं से शुरू होती है उस गाँव की विकास की यात्रा।

समाज शिल्पी दम्पति सर्वप्रथम अपने गाँव के सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक, शैक्षिक एवं पारिवारिक आदि सभी स्थितियों का अध्ययन करते हैं। तत्पश्चात अपना कार्य प्रारम्भ करते हैं। समाज शिल्पी दम्पति का कार्य निम्नलिखित है -

1. अशिक्षा समाप्त करना।
2. ग्राम में व्याप्त को कुप्रथाओं एवं कुरीतियों के प्रति ग्रामवासियों को जागरूक करना एवं उन्हें समाप्त करने का प्रयास करना।
3. ग्रामवासियों में स्वावलम्बन की भावना विकसित करना।
4. संस्थान द्वारा लोगों को स्वरोजगार प्रशिक्षण कार्यक्रमों से अवगत कराना एवं स्वरोजगार स्थापित करने की दिशा में उन्हें प्रेरित करना।
5. पारिवारिक विवादों का निपटारा करना।
6. ग्रामवासियों के आपसी विवादों का निस्तारण करना।
7. ऐसा प्रयास करना कि ग्रामीण स्तर के विवाद ग्राम स्तर पर ही निपटा लिए जाये एवं पुलिस तथा कोर्ट कचहरी के चक्कर से ग्रामवासियों को मुक्ति दिलाकर ग्राम का निर्माण करना।
8. परिवार के सदस्यों के मध्य कौटुम्बिक भावना का विकास करना।
9. ग्रामवासियों ने परस्पर सौहार्द संयोगिता एवं सहभागिता की भावना विकसित करना।
10. प्रदूषण मुक्त एवं हरे-भरे गांव का निर्माण करना। इसके लिए ग्रामवासियों के सहयोग से वृक्षारोपण करना, साफ-सफाई के बारे में जानकारी देना आदि।
11. स्वास्थ्य के प्रति ग्रामवासियों में सजगता उत्पन्न करना एवं ग्राम में व्याप्त कुपोषण समाप्त करना।
12. ग्राम में व्याप्त गरीबी को समाप्त करने का प्रयास करना।
13. महिलाओं में जागरूकता उत्पन्न करना।
14. सामाजिक संस्कारों को गति प्रदान कर ग्रामीणों को संस्कारवान बनाना।
15. गाँव में चलने वाले विद्यालय के शिक्षकों एवं वहाँ पढ़ने वाले बच्चों के माता-पिताओं के मध्य संवाद स्थापित कराना जिससे मानवीता मूलक संस्कार युक्त शिक्षण की व्यवस्था की जा सके।
16. ग्रामीण महिलाओं को युगानुकूल सामाजिक पुनर्रचना हेतु तैयार करना।
17. स्वास्थ्य, परिवार नियोजन, बच्चों के पालन-पोषण एवं उचित देखभाल आदि के बारे में महिलाओं को जानकारी देना।
18. गाँव में सामूहिक रूप से सांस्कृतिक कार्यक्रमों को आयोजित करने की प्रवृत्ति विकसित करना।
19. गाँव में मूलभूत सुविधाओं हेतु प्रयास करना।
20. ग्रामीण में अपने गांव में आवश्यक कार्यों को संपन्न कराने हेतु श्रमदान कराने हेतु संविधान की प्रवृत्ति विकसित करना।
21. ग्रामीण अशिक्षित लोगों को साक्षर बनाना।
22. स्कूल छोड़े हुए बच्चों में स्कूल जाने की प्रवृत्ति विकसित करना।

संक्षेप में कहा गया जाए तो समाज शिल्पी दम्पति का कार्य निम्न चीजों से ग्रामीणों को मुक्ति पिलाना है-

- मुकदमेबाजी
- घृणा

- बेरोजगारी
- संचारी रोग
- निरक्षरता
- गरीबी
- नशाखोरी
- बर्बरता
- घरेलू हिंसा
- लैंगिक अपराध
- लिंग आधारित भेदभाव
- आपसी अविश्वास
- बालश्रम
- पर्यावरण ह्रास व प्रदूषण
- बड़े बुजुर्गों का त्यागना
- मानसिक दबाव
- आत्महत्या

इनसे मुक्ति का अर्थ है सम्पूर्ण विकास लोगों का समुदाय का कल्याण

5.5.20 नन्हीं दुनिया :-

प्रचलित शिक्षा पद्धति के इन दोषों को पहचानते हुए संस्थान ने अपने मुख्य कार्य स्थल चित्रकूट में इन नन्हें-नन्हें होनहार बालक-बालिकाओं के स्वाभाविक, सहज एवं संतुलित विकास के लिए एक विशाल एवं मनोरंजन प्राकृतिक परिसर का चयन किया है। यह परिषद अनेक प्रकार के फूलों के पौधों, फलों एवं छायादार वृक्षों से सजाया गया है। परिसर में पानी के झरने से निकला नन्हा सा जल प्रवाह भी है। यह मनोहारी परिसर ऐसा है जिसमें बच्चों का बचपन स्वाभाविक रूप से खिलने का अवसर पाता है। वे प्रसन्नता पूर्वक इस मनोहारी परिसर में विचरण करते हुए प्रकृति द्वारा निर्मित कलाकृतियों का अवलोकन एवं आकलन कर सकते हैं।

इस परिसर में शिक्षित होने के लिए छोटे-छोटे बच्चे पारिवारिक वातावरण से निकलकर रोज चार-पाँच घंटे खुले वातावरण में रहते हैं उन्हें यहाँ नवीनता की अनुभूति होती है। अलग-अलग परिवारों से भिन्न-भिन्न वातावरण में पले बच्चों के अपरिचित समूह में सम्मिलित होकर उनका मन उचट न जाए, इसका प्रारम्भ से ही इस परिवार में ध्यान रखा जाता है। परिसर में अनेक खेल-खिलौनों की व्यवस्था है। परिसर में अपनी स्वतंत्रता से किसी भी खेल के खिलौनों से खेल सकते हैं। यहाँ कक्षाओं में बैठकर पढ़ने की पद्धति का अवलम्बन नहीं किया जाता है। परिसर में 3 वर्ष से 5 वर्ष के बच्चों को प्रवेश दिया जाता है।

"नन्हीं दुनिया को प्राथमिक विद्यालय का पूर्वाभ्यास मानना उचित नहीं होगा यह तो आकलन की जन्मजात प्रवृत्ति के समुचित विकास का प्राकृतिक प्रांगण है।" इसमें सहज में ही बच्चों में कलात्मक रूचि, रचनात्मक वृत्ति एवं सबके साथ सहयोगी मानसिकता का विकास होता है।

संस्थान द्वारा नन्हीं दुनिया विकसित करने का मुख्य उद्देश्य बच्चों का स्वाभाविक, सहज व्यावहारिकता एवं संतुलित विकास करना है जिससे उनके भीतर व्यावहारिकता एवं मूल मानवीय वृत्तियों का विकास हो सके, पारिवारिक मूल्यों एवं नैतिकता का समावेश हो सके। ऐसे ही मनोहारी एवं सुरम्य परिसर का चित्रकूट के समस्त गाँवों में निर्माण दीनदयाल शोध संस्थान करना चाह रहा है।

नन्हीं दुनिया में उन सभी बातों का ध्यान रखा गया है जो उनके स्वाभाविक विकास में सहायक है। नन्हीं दुनिया को निम्नलिखित प्रमुख हिस्सों में विभक्त किया गया है-

❖ **भूगोल मंडप-**

परिसर में एक भूगोल मंडप का निर्माण किया गया है। मानव जहाँ जीवन भर विचरण करता है उसका ज्ञान उसके लिए आवश्यक है। इस मंडप से अवगत कराया जाता है। इस मंडप में, नक्शे, चित्र, मॉडल एवं वीडियो कैसेट के माध्यम से बच्चों को भूगोल के चमत्कारी दृश्य दिखाया जाता है और सम्पूर्ण भूगोल की उन्हें जानकारी मिले ऐसा प्रयास किया जाता है "देखी हुई बातें बच्चों के मानस-पटल पर स्थाई रूप से अंकित होती है। उनका विस्मरण कभी भी नहीं होता। मनोवैज्ञानिक सिद्धांतों पर आधारित यह मंडप बच्चों के सीखने के लिए एक उत्तम स्थान है। आस-पास के भौगोलिक वातावरण में के बारे में एवं दुनियाँ के भौगोलिक वातावरण का खेल एवं स्वानुभव द्वारा यहाँ बच्चे स्वाभाविक रूप से ज्ञानार्जन करते हैं।

❖ **ऐतिहासिक मंडप-**

देश के इतिहास का ज्ञान बच्चों में राष्ट्र प्रेम का भाव जगाता है। ऐतिहासिक महापुरुषों के जीवनवृत्त उनमें नैतिकता का समावेश करते हैं। इन्हीं बातों को ध्यान में रखकर परिसर में एक ऐतिहासिक मंडप की व्यवस्था की गई है। इस मंडप में भारत के एवं विश्व की महान विभूतियों के चित्र एवं मूर्तियां रखी गई है। यहाँ कथा-कथन के रुचिपूर्ण माध्यम से इन महापुरुषों तथा महिलाओं के जीवन के वे प्रसंग बच्चों को सुनाए जाते हैं, जो उन्हें महानता प्रदान करने के कारण थे। इसी से बच्चों में इतिहास की जानकारी के साथ अपने व्यक्तित्व को निखारने की महत्वाकांक्षाएं अंकुरित होती हैं। देश एवं विश्व के इतिहास एवं उनके महापुरुषों के बारे में इस प्रकार रुचिपूर्ण ढंग से बच्चों को जानकारी प्रदान करने का यह एक उत्तम जरिया है।

❖ **पशु-पक्षी मंडप-**

"बच्चों में विभिन्न प्रकार के प्राणी देखने की सहज लालसा होती है। प्राणियों की उछल-कूद देखकर बच्चे खुश होते हैं।" बच्चों की स्वाभाविक वृत्ति को ध्यान में रखते हुए इस परिसर में एक पशु पक्षी की व्यवस्था की गई है। इस मंडप में विभिन्न पशु-पक्षियों के रंगीन चित्र एवं मूर्तियों की व्यवस्था है। इससे बच्चों को देशी एवं विदेशी पशु-पक्षियों से परिचित होने का अवसर मिलता है। समय-समय पर बच्चों को पशु-पक्षियों से जुड़े हुए विभिन्न रुचिकर वीडियो कैसेट भी दिखाए जाते हैं। इस प्रकार बच्चों को प्राकृतिक एवं उससे जुड़े कार्यों को जानने एवं समझने का अवसर मिलता है। प्रकृति के प्रति उनकी उत्सुकता एवं जिज्ञासा के फलस्वरूप उत्पन्न प्रश्नों के उत्तर इसके माध्यम से उन्हें स्वयं प्राप्त हो जाते हैं।

❖ **खेलकूद एवं व्यायाम मंडप-**

बच्चों का सर्वांगीण विकास करना शिक्षा का मुख्य उद्देश्य है। बच्चों के सर्वांगीण विकास के लिए आवश्यक है कि उनके मानसिक विकास के साथ-साथ संतुलित रूप से उनका शारीरिक विकास भी होता रहे। इस बात को ध्यान में रखकर परिसर में एक खेल-कूद एवं व्यायाम मंडप की व्यवस्था की गई है। इस मंडप में ऑडियो विजुअल सामग्रियों के माध्यम द्वारा ओलम्पिक से हुई विभिन्न प्रतिस्पर्धाएं, सर्कस में दिखाए जाने वाले शारीरिक कला -कौशल योगासन आदि को प्रदर्शित किया जाता है। विभिन्न खेलों के विजुअल कैसेट्स द्वारा बच्चों में खेलों के प्रति रुचि उत्पन्न की जाती है। बच्चों को, किसी खेल या शारीरिक कला में अधिक रूचि का अनुभव करने पर, उनके अभ्यास की भी सुविधा दी जाती है। इस प्रकार खेल-कूद और व्यायाम मंडप में बच्चों के शारीरिक विकास के लिए उत्तम अवसर प्रदान किए जाते हैं।

❖ **जल क्रीड़ा-**

बच्चों को जीवन के प्रारम्भ से ही स्नान आदि की आदत के कारण जल से खेलने की आनन्द आता है। अतः इस परिसर में बच्चों के लिए जल-क्रीडा की व्यवस्था भी की गई है। तीन जलाशयों का निर्माण किया गया है। एक जलाशय में केवल डेढ़ फीट गहरा जल रहता है। दूसरे में ढाई फीट तथा तीसरे में साढ़े तीन फीट से चार फीट जल रहने की व्यवस्था है।बच्चे अपनी ऊँचाई के अनुसार जल-क्रीड़ा का आनन्द ले सकते हैं। बालक एवं बालिकाओं के लिए अलग-अलग प्रसाधन कक्षों की व्यवस्था है। जल-क्रीड़ा के बाद बच्चों को कपड़े बदलने का स्थान बना हुआ है। जल

क्रीडा मंडप में बच्चे तैरने की कला में निपुणता प्राप्त करते हैं। इसके माध्यम से अपने साफ-सफाई के प्रति सजगता आती है। जल क्रीड़ा मंडप बच्चों के संतुलित विकास में सहायक है।

❖ **अक्षर ज्ञान मंडप-**

खेल-खेल में यदि बच्चों को सीखने का अवसर मिलता है तो बच्चे सहजता पूर्वक सरलता से सीख लेते हैं। इसी बात को ध्यान में रखकर 'नन्हीं दुनिया' परिसर में एक अक्षर ज्ञान मंडप की व्यवस्था की गई है। इस परिसर में अलग-अलग स्थानों पर देवनागरी लिपि के एवं रोमन लिपि के अक्षरों के बड़े-बड़े व सुन्दर नमूने मंडप में इन अक्षरों को प्रस्तुत किए गए हैं। अक्षरों से खेलने की मंडप में व्यवस्था है। इस मंडप में इन अक्षरों को देखकर उन्हें बच्चे बना सकें, इसके लिए रंग-बिरंगी चाक स्टिक्स भी उपलब्ध रहती है। इसके माध्यम से बच्चों में लेखन कला का विकास होता है और इसके हस्त लेख में सुधार होता है।

इस प्रकार दीनदयाल शोध संस्थान के मुख्य कार्य स्थल चित्रकूट में निर्मित बालोद्यान 'नन्हीं दुनिया' बच्चों को इस प्रकार का प्राकृतिक एवं सहज वातावरण उपलब्ध कराती है जहाँ स्वाभाविक रूप से उनकी आंतरिक शक्तियों का सहजता पूर्वक विकास हो सके, मानवीय वृत्तियों का उनके भीतर समावेश हो सके और मानसिक एवं शारीरिक रूप से उनका संतुलित विकास हो सके।

षष्ट अध्याय

परमानन्द आश्रम पद्धति विद्यालय का अवलोकन

भारत में विभिन्न धर्मों, समुदायों एवं जातियों के लोग निवास करते हैं। इनके खान-पान, रहन- सहन एवं जीवन स्तर में भिन्नता है। देश की आबादी का एक बहुत बड़ा हिस्सा अभी भी मूलभूत सुविधाओं से वंचित है। यह वर्ग अनुसूचित या दलित वर्ग कहलाता है। अनुसूचित जातियों के विकास हेतु केन्द्रीय एवं राज्य सरकारों द्वारा स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद से ही काफी योजनाएं संचालित की जा रही है। लोकसभा एवं राज्य विधानसभाओं में उनको उचित प्रतिनिधित्व प्रदान करने के लिए सीटें आरक्षित की गई हैं। इसी प्रकार केन्द्र व राज्य स्तर की नौकरियों में भी उन्हें आरक्षण प्राप्त है। लेकिन वस्तु स्थिति यह है कि अभी भी उनकी स्थिति में विशेष सुधार नहीं है। जनसंख्या का यह विशाल वर्ग अभी भी स्वतंत्रता के वास्तविक अर्थ को समझ नहीं पाया है और मूलभूत सुविधाओं से वंचित रहकर पिछड़ेपन का जीवन जीने को मजबूर है।

संस्थान ने ऐसे वर्ग को शिक्षित करने का प्रयास किया है। संस्थान पिछड़ी व ग्रामीण जनता के विकास का उद्देश्य लेकर ही सतत् कार्य संलग्न है। संस्थान का केन्द्र बिन्दु ही देश के उन पिछड़ी, असहाय, पीड़ित व निर्धन जनसंख्या है जो देश के पिछड़े अचलो में निवास कर रहे हैं जो अभी भी विकास की राह से बहुत दूर खड़े हैं। पंडित दीनदयाल उपाध्याय के शब्दों में – "आर्थिक योजनाओं तथा आर्थिक प्रगति की माप, समाज के ऊपर की सीढ़ी पर पहुँचे व्यक्ति से नहीं, बल्कि सबसे नीचे की सीढ़ी पर विद्यमान व्यक्ति से होगा।

चित्र – 6.10

ग्रामों में, जहाँ माता और पिता अपने बच्चों के भविष्य को बनाने में असमर्थ है, वहाँ जब तक हम आशा और पुरुषार्थ का संदेश नहीं पहुँच पाएंगे तब तक राष्ट्र के चैतन्य को जागृत नहीं कर सकेंगी।

संस्थान ने चित्रकूट से 35 किलोमीटर उत्तर प्रदेश में स्थित गनीवां ग्राम में अनुसूचित जाति के बालक-बालिकाओं की शिक्षा हेतु स्वामी परमानन्द हरिजन आवासीय विद्यालय (परमानन्द आश्रम पद्धति विद्यालय वर्तमान में) के नाम से एक आश्रम पद्धति विद्यालय की 1 जुलाई सन् 2000 में किया। सत्र 2000 में शिक्षण कार्य संचालित हो रहा है। बालक एवं बालिकाओं के रहने के लिए अलग-अलग आवासीय परिसरों की व्यवस्था है।

6.1 विद्यालय की भौगोलिक स्थिति वातावरण- यह विद्यालय कर्वी से रगौली राजापुर मार्ग में परसिद्धपुर गनीवां में स्थित है। यह विद्यालय 5 बीघा के एरिया में फैला है। इसका अक्षांश एवं देशांतर विस्तार लगभग 25.319370, 81.080019 है। यहाँ का वातावरण शान्त एवं हरा-भरा है। यह परिसर पेड़-पौधों से सुसज्जित है। यहाँ पर विभिन्न प्रकार के पेड़-पौधे है, जैसे –नीम, पाँच पेड़ जामुन, पचास पेड़ आँवला, पन्द्रह पेड़ अमरूद, दस पेड़ करौंदा,पाँच पेड़ नीबू, छः पेड़ सहिजन, तीन पेड़ आम, दो पेड़ बेल, दो पेड़ कटहल आदि। इक्कीस प्रकार के फूल के तथा अन्य पौधे हैं जिनमें कुछ पौधों के नाम इस प्रकार हैं –चमेली, चम्पा, सूरजमुखी, केंडुला, पेंजी, निर्गुण्डी, खसमस, कंडेल तथा लेमन घास टी (चाय में प्रयोग करते हैं जिससे पेट में गैस नहीं बनती है और स्वाद में भी परिवर्तन आ जाता है) आदि पेड़-पौधे हैं।
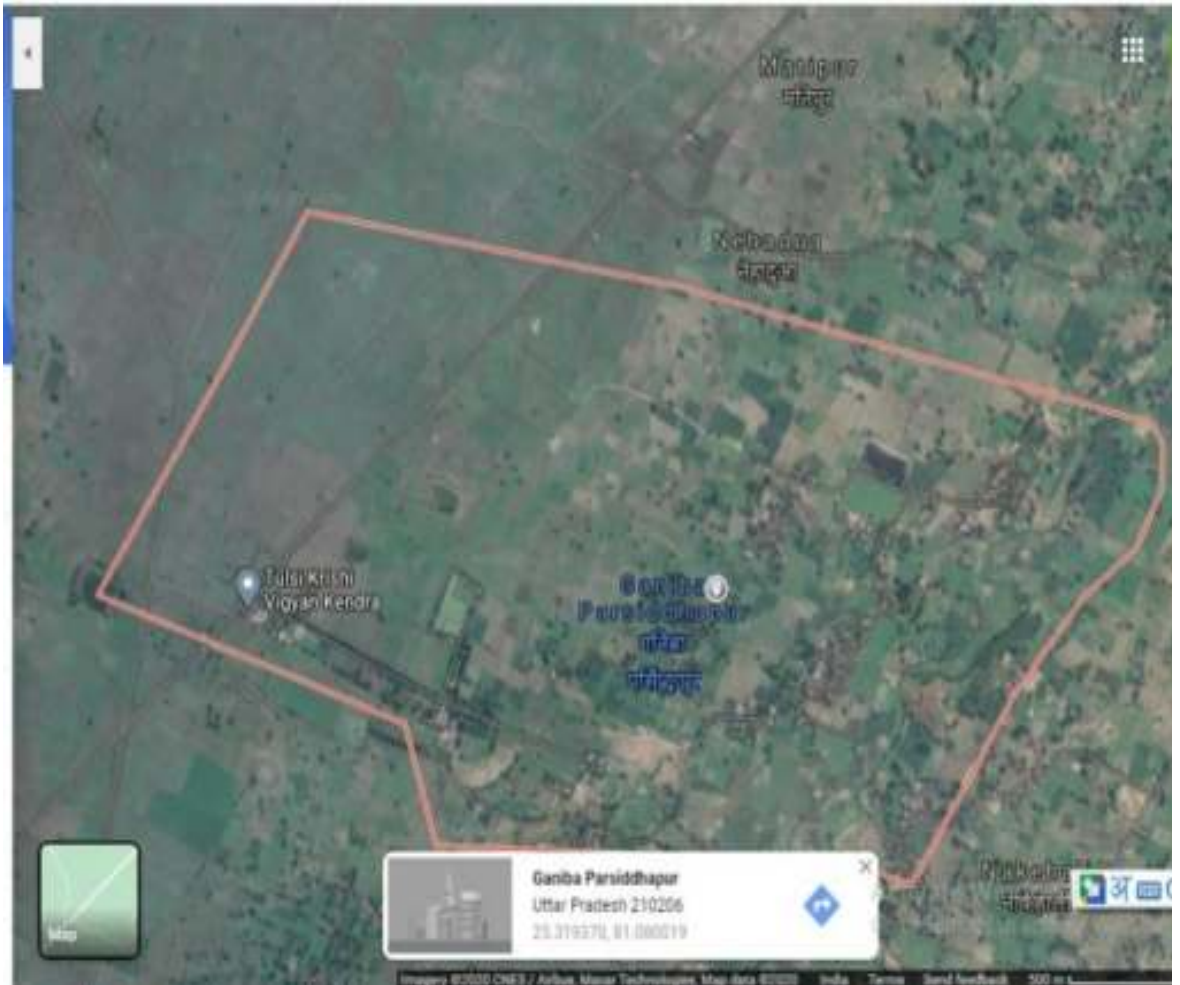
चित्र 6.11 परमानन्द आश्रम विद्यालय का मानचित्र

चित्र 6.12 विद्यालय का प्राकृतिक परिवेश

चित्र 6.13 विद्यालय में स्थित मन्दिर

6.2 विद्यालय की स्थापना- 1 जुलाई सन् 2000 में हुई थी।

6.3 विद्यालय का प्रकार- अनुसूचित जाति आवासीय विद्यालय

6.4 विद्यालय की वित्तीय स्थिति-

यह विद्यालय 'सामाजिक न्याय एवं आधिकारिक मंत्रालय भारत सरकार के अधीन है। जिले में समाज कल्याण विभाग के अन्तर्गत। यहाँ के कर्मचारियों को मानदेय भारत सरकार द्वारा प्रदान किया जाता है। इस विद्यालय में जो भी वित्तीय सम्बन्धी और सहायता है वो दीनदयाल शोध संस्थान चित्रकूट (DRI) द्वारा प्रदान किया जाता है। यहाँ की सभी प्रकार की सुविधाएं (DRI) द्वारा ही उपलब्ध कराया जाता है। इसका केन्द्र बिन्दु 'डीआरआई' है।

6.5 प्रकल्प का विचार-

शिक्षा के माध्यम से युगानुकूल सामाजिक पुनर्रचना

6.6 उद्देश्य-

संस्थान का उद्देश्य ग्रामीण पिछड़ी जनता का समग्र एवं संतुलित विकास कर युगानुकूल सामाजिक पुनर्रचना करना है। इस उद्देश्य की पूर्ति हेतु संस्थान शिक्षा, स्वास्थ्य,स्वावलम्बन, सदाचार आदि के लिए अनेक कार्यक्रम संचालित कर रहा है। शिक्षा प्रसार हेतु कई विद्यालयों का संचालन कर रहा है। यह सहशिक्षा का आश्रम पद्धति विद्यालय है जिसमें अनुसूचित जाति के 100 बालक एवं बालिकाओं के शिक्षण एवं आवास का प्रबंध है। इस विद्यालय में उत्तर प्रदेश सरकार द्वारा निर्धारित पाठ्यक्रम संचालित किया जाता है। पाठ्यक्रम के अतिरिक्त समय-समय पर पाठ्य सहगामी क्रियाये संचालित की जाती रहती हैं। खेलकूद के अतिरिक्त व्यायाम एवं योगासन की भी सुविधा छात्रों को दी जाती है। इस विद्यालय में प्राथमिक स्तर तक की कक्षाएं संचालित की जाती है। समय-समय पर अनेक प्रतियोगिताओं का आयोजन विद्यालय परिसर में किया जाता रहता है,जिससे छात्र-छात्राओं में स्वस्थ प्रतिस्पर्धा एवं सहयोग की भावना विकसित होती है। स्वामी परमानन्द आवासीय विद्यालय का निम्नलिखित प्रमुख उद्देश्य है -

- छात्रों के जीवन के लिए लाभदायी चरित्र एवं नैतिकता का विकास करने वाली शिक्षा प्रदान करना।
- अनुसूचित जाति के छात्र-छात्राओं को इस प्रकार शिक्षित करना कि सामान्य वर्ग के छात्रों के साथ-साथ कदम से कदम मिलाकर चल सके।
- अनुसूचित जाति के छात्र-छात्राओं में व्याप्त सामाजिक असुरक्षा की भावना समाप्त करना।
- स्वाभिमान एवं स्वावलम्बन की भावना विकसित करना।
- विद्यालय में पढ़ने वाले छात्र-छात्राओं का सर्वांगीण विकास करना।
- अनुसूचित जाति और जनजाति के छात्र-छात्राओं के लिए स्वस्थ वातावरण विकसित करना।
- बालक-बालिकाओं के लिए लाभदायी एवं उचित चरित्र और नैतिकता विकसित करने वाली शिक्षा को बढ़ावा देना।

6.7 गतिविधियाँ-

(1) शैक्षणिक- प्रवेश, शिक्षण, निरीक्षण, स्वाध्याय, उपस्थिति, परीक्षण, मूल्यांकन

(2) शिक्षणेत्तर- सांस्कृतिक कार्यक्रम, खेलकूद, प्रशिक्षण, बागवानी, त्योहार, जयंतियाँ, प्रातः स्मरण, पुरातन

छात्र परिषद, अभिभावक सम्पर्क व सम्मेलन

(3) व्यवस्थाएं - दिनचर्या, शिक्षक दिनाधिकारी, गट व्यवस्था, छात्रावास, चिकित्सा, भोजनालय व्यवस्था, वस्त्र, जल, विद्युत, स्वच्छता, सुरक्षा व पुस्तकालय व्यवस्था

[illegible]

शिक्षण गतिविधियाँ

1	[illegible]	श्री वरुण कुमार त्रिपाठी
2	परीक्षा	श्री अमित शुक्ला

शिक्षणेत्तर गतिविधियाँ

1	बाल भारती	श्री अमित शुक्ला,
2	सांस्कृतिक एवं वंदना	श्रीमती शोभावती
3	खेल एवं व्यायाम, [illegible]	श्री संजय कुमार [illegible], श्री वरुण कुमार त्रिपाठी
4	अध्ययन-अध्यापन सामग्री एवं पुस्तकालय(स्वाध्याय)	श्री दयाशंकर वर्मा
5	अभिभावक एवं पुरातन छात्र सम्पर्क	श्री दयाशंकर वर्मा, श्री वरुण कुमार त्रिपाठी

व्यवस्था गतिविधियाँ

1	अनुशासन एवं संस्कार	श्री वरुण कुमार त्रिपाठी
2	भोजन, वस्त्र एवं आवास	श्रीमती शोभावती
3	कार्यालय लेखा	श्री सन्तोष कुमार
4	जल-विद्युत एवं निर्माण	श्री सन्तोष कुमार
5	दृश्य-श्रव्य	श्री सन्तोष कुमार
6	वस्तु भण्डार (स्टोर)	श्रीमती शोभावती
7	स्वच्छता एवं श्रम साधना	श्री अमित शुक्ला
8	चिकित्सा	श्री दयाशंकर वर्मा

चित्र 6.14 शिक्षण गतिविधियाँ

चित्र 6.17 अनुशासन एवं संस्कार

6 .8 विद्यालय की समय सारणी-

चित्र 6.18 विद्यालय की समय सारणी

6.9 समग्र विकास के आयाम-

सद्ज्ञान, सहानुभूति, संस्कृति, शिक्षा, सहयोग, स्वावलम्बन, स्वदेशाभिमान, सहृदयता, सेवा, समरसता, शान्ति, शाश्वत सुख

6.10 विद्यालय के प्रधानाचार्य- श्री बरुण कुमार

चित्र 6.19 विद्यालय के प्रधानाचार्य, श्री बरुन कुमार

6.11 विद्यालय में शिक्षकों की संख्या- 08

(1) श्री बरुण कुमार 'अंग्रेजी' बी.एड.

(2) श्री दयाशंकर वर्मा 'विज्ञान,गणित' बी.एड.

(3) श्री सन्तोष कुशवाहा 'सा॰विषय, गणित' बी.एड.

(कार्यालय कार्य)

(4) श्री संजय कुमार 'हिन्दी' बी.एड.

(5) श्री अमित शुक्ला 'हिन्दी,संस्कृत' बी. एड.

(6) श्री रामराज पाण्डेय 'संगीत टीचर'

(7) श्री मुकेश पाठक 'खेल शिक्षक'

(8) श्री इन्द्र पाण्डेय 'कार्यालय सहायक'

6.12 विद्यालय में अन्य कर्मचारियों की संख्या- 09

चिकित्सक - रिक्त

छात्रावास अध्यक्षिका - श्रीमती शोभावती

आया - श्रीमती सोमवती

सन्देशवाहक - श्री रामनरेश कुशवाहा

रसोईयाँ- श्री रामनरेश वर्मा

श्री शिवाकान्त

श्रीमती कृष्णा देवी

चौकीदार – श्री शिवमंगल

सफाई कर्मी - श्री रामकृपाल

6.13 विद्यालय में प्रवेश की प्रक्रिया- विद्यालय में नए प्रवेश 10 फरवरी से प्रारम्भ होते हैं। प्रवेश के समय अभ्यर्थी (छात्र/छात्रा) का आधार कार्ड की फोटो कॉपी, 4 फोटो, माता-पिता का निवास प्रमाण-पत्र, जाति प्रमाण-पत्र, आय प्रमाण-पत्र, आदि दस्तावेज़ जमा करना होता है। सम्भवतः प्रवेश परीक्षा मार्च माह में सम्पन्न होती है। प्रवेश परीक्षा की प्रक्रिया – लिखित परीक्षा, व्यक्तिगत(साक्षात्कार) तथा माता-पिता का साक्षात्कार भी किया जाता है। व्यक्तिगत(साक्षात्कार) के लिए लिखित परीक्षा में अभ्यर्थी तीन गुना पास किए जाते हैं। पास होने वाले अभ्यर्थियों का परिणाम उसी दिन घोषित कर दिया जाता है। प्रवेश सीटों की संख्या मानक के आधार पर 20 निर्धारित की गयी है।

6.14 विद्यालय की फीस- इस विद्यालय में किसी भी प्रकार का शुल्क छात्रों से नहीं लिया जाता है, यह निःशुल्क आवासीय विद्यालय है।

6.15 विद्यालय में छात्रों की संख्या- 100

बालक- 64

बालिका- 36

6.16 विद्यालय भवन-

यह विद्यालय कंकरीट, बालू, ईंट-पत्थर, सीमेन्ट तथा सरिया से बना हुआ है। यह भवन दो मंजिल का बहुत ही सुन्दर बना हुआ है। इस परिसर में जो भवन बने हुए हैं वो इस प्रकार हैं- दो छात्रावास की बिल्डिंग अलग-अलग दो मंज़िला है, दो बिल्डिंग स्टॉफ के लिए अलग-अलग दो मंज़िला है, एक विशाल सभागार, एक वाहन स्टैण्ड तथा चतुर्थ श्रेणी के कर्मचारियों के लिए अलग से आवास बने हैं।

चित्र 6.20 विद्यालय भवन

चित्र 6.21 विद्यालय भवन

6.17 कक्षाकक्ष-

इस विद्यालय में पर्याप्त रूप से कक्षाकक्ष उपलब्ध है, जो इस प्रकार हैं- पाँच शिक्षण कक्ष एक कार्यालय, एक पुस्तकालय, एक परीक्षा विभाग, दो खाद्यान्न स्टोर तथा तीन स्टोर ये बालक छात्रावास में अवस्थित हैं। पाँच शिक्षण कक्ष बालिका छात्रावास में अवस्थित हैं।

6.18 सभागार-

इस विद्यालय में एक विशाल सभागार है जिसमें साथ में रसोईघर भी है, इसमें बच्चों के लिए भोजन बनता है तथा यहीं पर बैठकर सभी छात्र/छात्राएँ, दिनाधिकारी शिक्षक भोजन ग्रहण करते है। सभागार के बगल में ही पेयजल की व्यवस्था है एवं छात्र अपने-अपने भोजन के बर्तन धोते हैं।

चित्र 6.22 सभागार

6.19 कम्प्यूटर-

विद्यालय में पाँच कम्प्यूटर एवं प्रिन्टर है जो विद्यालय के कार्य एवं शिक्षण कार्य के प्रयोग में लाया जाता है। विद्यालय में 16 सीसीटीवी कैमरें सन् 2020 में लगाये गए हैं जिनके माध्यम से वहाँ के सुरक्षा व्यवस्था के रख-रखाव में सहयोग प्रदान करते हैं।

6.20 पुस्तकालय-

इस विद्यालय में छात्रों के लिए एक पुस्तकालय है जिसमें अध्ययन से सम्बन्धित पुस्तकें उपलब्ध हैं। यहाँ पर छात्र/छात्राएं एक साथ बैठकर पुस्तकों का अध्ययन करते हैं।

चित्र 6.23 पुस्तकालय प्रभारी, श्री दयाशंकर (शिक्षक)

चित्र 6.24 पुस्तकालय में अध्ययन करती हुई छात्राएं

6.21 खेल का मैदान-

इस विद्यालय परिसर में खेल के लिए दो मैदान है, एक मुख्य द्वार के सामने अर्थात चहार दीवार के बाहर है तथा विद्यालय के अन्दर भी खेलने के लिए पर्याप्त मैदान है।

चित्र 6.25 खेलते हुए छात्र/छात्राएं

चित्र 6.26 खेलते हुए छात्र/छात्राएं

6.22 खेल-

इस विद्यालय में विभिन्न प्रकार के खेल जैसे - क्रिकेट, बैडमिंटन, कैरमबोर्ड, लूडो, चेस, खो-खो, कबड्डी {खो-खो, कबड्डी खेल वेश (ड्रेस में) }संचालक- संजय कुमार/मुकेश पाठक के द्वारा आयोजित किया जाता है।

चित्र 6.27 गेम खेलते हुए छात्र/छात्राएं

6.23 शौचालय/स्नानघर -

इस विद्यालय में शौचालय एवं स्नान घर की व्यवस्था छात्र/छात्राओं के लिए अलग-अलग है। यह सुविधा अलग-अलग छात्रावास में है। स्टॉफ के लिए व्यवस्था उनके आवास पर ही उपलब्ध है।

चित्र 6.28 शौचालय

चित्र 6.29 स्नानघर

6.24 पाठ्यक्रम-

इस विद्यालय में पाठ्यक्रम उत्तर प्रदेश सरकार द्वारा परिषदीय विद्यालय की भाँति चलते हैं।

6.25 पाठ्यसहगामी क्रियाएं-

इस विद्यालय में पाठ्यसहगामी क्रियाएं के अन्तर्गत चाक निर्माण, मोमबत्ती निर्माण, आचार तथा बागवानी सम्बन्धी क्रियाएं समय-समय पर किया जाता है।

चित्र 6.30 बागवानी करती छात्राएं

6.26 व्यक्तित्व का विकास-

व्यक्तित्व विकास के लिए दीनदयाल शोध संस्थान चित्रकूट (DRI) में विद्यालय के छात्र/छात्राओं को पंद्रह दिवस का प्रशिक्षण निःशुल्क दिया जाता है तथा दूसरे स्कूल के बच्चों को प्रवेश शुल्क के आधार पर प्रशिक्षण दिया जाता है, इससे बच्चों का व्यक्तिगत विकास होता है और उन्हें आत्मनिर्भर एवं स्वावलम्बी बनाया जाता है।

6.27 छात्रावास-

यहाँ पर छात्र/छात्राओं के लिए अलग-अलग छात्रावास उपलब्ध है। बालक छात्रावास में 16 कमरे हैं तथा बालिका छात्रावास में 8 कमरे हैं। बालक छात्रावास के पाँच कमरों में बालक रहते हैं तथा बालिका छात्रावास के तीन कमरों में छात्राएं रहती हैं।

चित्र 6.31 बालक छात्रावास

चित्र 6.32 बालिका छात्रावास

6.28 छात्रों को पुरस्कार-

इस विद्यालय में विभिन्न प्रतियोगिताओं जैसे खेल, सांस्कृतिक कार्यक्रम, भाषण प्रतियोगिता, निबन्ध प्रतियोगिता तथा वार्षिक परीक्षा परिणाम आदि प्रथम, द्वितीय तथा तृतीय स्थान प्राप्त करने वाले छात्र/छात्राओं को पुरस्कार भी वितरण किये जाते हैं।

6.29 वाहन सुविधा-

विद्यालय में विद्यालय कार्य हेतु एक मोटर साइकिल तथा वाहन स्टैंड भी उपलब्ध है। `

चित्र 6.33 वाहन स्टैण्ड

सप्तम अध्याय

परमानन्द आश्रम पद्धति विद्यालय की विशिष्टताएं

7.1 सत्र प्रारम्भ में पूजन- सत्र प्रारम्भ होने से पहले सभी बच्चों के द्वारा पाटीपूजन, पुस्तक पूजन, तथा हवन कराया जाता है।

चित्र 7.34 सत्र प्रारम्भ में पूजा करती छात्राएं

7.2 निःशुल्क स्वास्थ्यदायक आहार- इस विद्यालय में बालक/बालिकाओं को मीनू के आधार पर स्वास्थ्यदायक निःशुल्क आहार दिया जाता है। भोजन वितरण (कक्ष व्यवस्था के अनुसार) के समय प्रेरक गीत एवं भोजन मंत्र सामूहिक रूप से होता है।

चित्र 7.35 भोजन वितरण के समय प्रेरक गीत गाते हुए बच्चे

चित्र 7.36 भोजन मंत्र करते छात्र/छात्राएं

8.3 निःशुल्क चिकित्सा-

विद्यालय में छात्रों के लिए निःशुल्क चिकित्सा की व्यवस्था है।

8.4 निःशुल्क आवासीय शिक्षा-

यह निःशुल्क आवासीय विद्यालय है। इस विद्यालय में बालक/बालिकाओं के लिए अलग-अलग छात्रावास की सुविधा है। इस विद्यालय में बालक/बालिकाओं के अतिरिक्त यहाँ के कर्मचारियों तथा अतिथियों के लिए भी अलग-अलग आवासों की सुविधा है।

7.5 बालसभा मण्डल –

यह बच्चों (छात्र/छात्राएँ)की समिति है। इस समिति में 21 प्रकार की समितियाँ हैं। इसकी बैठक 2 माह में एक बार होती है। इस समिति में निम्न पदाधिकारी होते हैं - अध्यक्ष, उपाध्यक्ष, महामंत्री, उपमंत्री, सेनपति, उपसेनापति आदि।

2020 में पदाधिकारियों के नाम इस प्रकार हैं-

अध्यक्ष- शिवम कुमार कक्षा-5

उपाध्यक्ष- दीपक कुमार कक्षा-5

महामंत्री- अर्चना देवी कक्षा-5

उपमंत्री- दीपक कक्षा-5

सेनापति- शिवम कुमार कक्षा-5

उपसेनापति- रामधनी कक्षा-5

21 प्रकार की समितियाँ निम्न हैं -

(1) पुस्तकालय समिति बालक

(2) पुस्तकालय समिति बालिका

(3) बागवानी समिति बालक

(4) बागवानी समिति बालिका

(5) चिकित्सा समिति बालक

(6) चिकित्सा समिति बालिका

(7) खेल विभाग समिति बालक

(8) खेल विभाग समिति बालिका

(9) सांस्कृतिक समिति बालक

(10) सांस्कृतिक समिति बालिका

(11) खोया-पाया समिति

(12) उपस्कर(भौतिक सामग्री) समिति

(13) स्वच्छता समिति

(14) छात्रावास समिति बालक

(15) छात्रावास समिति बालिका

(16) अतिथि सत्कार समिति

(17) खाद्यान स्टोर समिति

(18) जल,विद्युत समिति

(19) सिलाई समिति बालक

(20) सिलाई समिति बालिका

(21) उद्योग अध्ययन समिति

7.6 बसंतोत्सव-

यहाँ बसंतोत्सव में अखण्ड रामचरितमानस का पाठ बच्चे/कार्यकर्ता एवं पूजन-हवन करते हैं।

7.7 बालसभा-

प्रत्येक शनिवार को बाल सभा (कम से कम 14 बाल सभाएँ) का आयोजन किया जाता है जिसका संचालन बच्चों द्वारा (सभी कार्य) किए जाते हैं।

चित्र 7.37 बालसभा कार्यक्रम

7.8 टीवी कार्यक्रम-

छात्र/छात्राओं के मनोरंजन के लिए विद्यालय में एक टीवी है जो गुरुवार तथा रविवार को शाम 4:30-5:30 बजे तक बच्चों को टी०वी० कार्यक्रम दिखाया जाता है।

7.9 हनुमान चालीसा-

मंगलवार तथा शनिवार को हनुमान चालीसा वाद्ययंत्र के साथ बच्चों द्वारा सामूहिक रूप से किया जाता है तथा शेष दिनों मे दिन क्रम के अनुसार संध्या वंदन (आरती) होती है।

7.10 उद्योग अध्ययन-

मोमबत्ती, मुरब्बा, अचार आदि का निर्माण छात्रों द्वारा कराया जाता है।

अष्टम अध्याय

निष्कर्ष एवं सुझाव

8.1 निष्कर्ष-

नानाजी देशमुख ने अपने बाल्यकाल जीवन में गरीबी एवं कष्टों का सामना किया है। उनका जीवन संघर्षों से परिपूर्ण था। उन्होंने अपने जीवन की कष्टमय परिस्थिति को देखकर उन्होंने दीनदयाल शोध संस्थान की स्थापना की जिससे समाज में उपस्थित गरीब लोगों को निःशुल्क शिक्षा, स्वावलम्बन हेतु व्यावसायिक शिक्षा हेतु कई परियोजनाएं संचालित की। समाज में गरीब वर्ग (अनुसूचित जाति, अनुसूचित जनजाति) के बच्चों को शिक्षा प्रदान करने हेतु निःशुल्क आवासीय विद्यालयों की स्थापना की जिससे कि पिछड़े वर्ग समाज के बच्चों को भी शिक्षा प्रदान कर उन्हें आगे बढ़ाया जा सके। इस विद्यालय के निष्कर्ष इस प्रकार हैं -

- इस विद्यालय में बागवानी के लिए पर्याप्त मैदान उपलब्ध है जिससे छात्रों के द्वारा समग्र गतिविधियाँ करायी जाती है।
- विद्यालय परिसर में विभिन्न प्रकार के पेड़ जैसे – आंवला, करौंदा, आम आदि हैं, जिससे बच्चों को आचार बनाना सिखाते है।
- यहाँ पर शिक्षा व्यवस्था आश्रम पद्धति की तरह है। समय से जगना, नित्य क्रिया करना, वन्दना, सायं के समय शाखा आदि करना।
- यहाँ पर कक्षावार पाँच से छः छात्र/छात्राओं की दैनिक ड्यूटी लगायी जाती है और वही बच्चे नास्ता, पानी, भोजन आदि कराने की ज़िम्मेदारी होती है।
- इस विद्यालय में प्रत्येक दिन अलग-अलग शिक्षक दिनाधिकारी होते है। अगर कोई शिक्षक अपने दिन में अनुपस्थित है तो उसमें उस शिक्षक की जगह अगले शिक्षक को दिनाधिकारी नियुक्त किया जाता है। यह चक्रीय होता है।
- यहाँ पर बच्चे भोजन के समय में भोजन वितरण के समय प्रेरक गीत तथा भोजन मंत्र होता है। सभी बच्चे एक साथ मिलकर अनुशासन से शान्त पूर्वक भोजन करते हैं।

8.2 शैक्षिक उपादेयता एवं सुझाव-

आज पूरे देश में निजी विद्यालयों की संख्या अत्यधिक बढ़ गई है। किन्तु इन विद्यालयों का उद्देश्य शिक्षा प्रदान करना नहीं है बल्कि इनका उद्देश्य व्यावसायिक है। शिक्षा को व्यवसायपरक होना चाहिए किन्तु उसे पैसे की अंधी दौड़ में शामिल करना राष्ट्र हित में नहीं है। शिक्षा परिवर्तन की वाहक है। शिक्षा व्यक्ति को समग्र रूप में बनाने का माध्यम है क्योंकि संपूर्ण विश्व का इतिहास इस बात का साक्षी है।

21वीं सदी ज्ञान की सदी है। संपूर्ण विश्व विचारों के संक्रमण काल से गुजर रहा है। जहाँ पुरानी परम्परायें नष्ट हो रही हैं, वही नए-नए प्रतिमान स्थापित हो रहे हैं। आज आवश्यकता है बदलते वैश्विक परिदृश्य में अपनी सार्थक एवं सशक्त भूमिका का निर्वाहन करने की। हमारी शिक्षा पद्धति, जो विभिन्न दोषों से ग्रसित है तथा विभिन्न चुनौतियों का सामना भी कर रही है, इसमें परिवर्तन करने की आवश्यकता है। आज हमें एक ऐसे आदर्श शैक्षिक निदर्श (मॉडल) की आवश्यकता है जो इन चुनौतियों का सम्यक एवं सफल समाधान प्रस्तुत कर सकें।

नानाजी देशमुख ने एक ऐसा ही शैक्षिक निदर्श (मॉडल) पर्याप्त चिन्तन एवं मनन के पश्चात देश के समक्ष प्रस्तुत किया है। नानाजी शिक्षा के माध्यम से **स्वावलम्बन, स्वाभिमान** तथा **विनम्रता** जैसे शाश्वत मानवीय मूल्यों का विकास विद्यार्थियों में करना चाहते थे। उन्होंने एक ऐसी शिक्षा पद्धति की नवरचना की जो मानवीय है, जिसमें श्रम एक महत्वपूर्ण तत्व के रूप में सम्मिलित है। चूँकि भारत गाँवों का देश है, अतः गाँव का विकास आज हमारी प्राथमिक आवश्यकता है। नानाजी की शिक्षा पद्धति ग्रामोन्मुखी तथा रोजगारोन्मुखी है अर्थात उनका शैक्षिक चिन्तन ग्रामीण विकास की अवधारणा पर आधारित है।

नानाजी के शैक्षिक विचारों में एक मानवीता मूलक विकासशील समाज की रचना का सार्थक प्रयोग निहित है। अतः आज देश को एक ऐसे शैक्षिक निदर्श (मॉडल) की आवश्यकता है जिसके आधार पर एक सजग और विकसित भारत को खड़ा करने के साथ देश के नौनिहालों का भविष्य भी उज्जवल बन सके। वर्तमान सन्दर्भ में नानाजी के शैक्षिक विचार इन आवश्यकताओं की पूर्ति का एक विकल्प हो सकते हैं।

सुझाव-

- परमानन्द आश्रम पद्धति विद्यालय की तरह अन्य आवासीय विद्यालयो में भी दैनिक दिनचर्या होना चाहिए।
- यहाँ की तरह अन्य विद्यालयों में भी छात्र/छात्राओं के द्वारा बागवानी कराना चाहिए।
- यहाँ की तरह अन्य विद्यालयों में भी प्रेरक गीत तथा भोजन मंत्र करना चाहिए।
- यहाँ की समग्र विकास की तरह अन्य विद्यालयों में भी स्वावलम्बन हेतु शिक्षा प्रदान की जानी चाहिए।

8.3 भावी शोध हेतु सुझाव-

1. राष्ट्रीय शिक्षण हेतु नानाजी देशमुख के द्वारा एवं उनकी प्रेरणा से स्थापित संस्थाओं के उद्देश्यों, कार्य-प्रणाली, पाठ्यक्रम, शिक्षण-पद्धति, विद्यालय-पर्यावरण, गुरु-शिष्य सम्बन्ध आदि क्षेत्रों की समीक्षा हेतु अनुसंधान कार्य किया जा सकता है।
2. सरस्वती शिशु मन्दिर एवं सरस्वती विद्या मन्दिर की शैक्षिक व्यवस्था की तुलना समस्तरीय राज्य सरकार द्वारा संचालित विद्यालयों की शैक्षिक व्यवस्था का तुलनात्मक अध्ययन किया जा सकता है।
3. नानाजी देशमुख द्वारा स्थापित प्रकल्पों पर शोध अध्ययन किया जा सकता है।
4. नानाजी देशमुख जी के राजनैतिक, आर्थिक और सामाजिक विचारों के परिप्रेक्ष में शोध कार्य किया जा सकता है।
5. नानाजी देशमुख के व्यक्तित्व एवं कृतित्व पर शोध किया जा सकता है।
6. नानाजी देशमुख के दार्शनिक विचारों पर शोध कार्य किया जा सकता है।
7. नानाजी देशमुख के जीवन-दर्शन का समग्र रूप से अध्ययन किया जा सकता है।
8. नानाजी देशमुख के शैक्षिक, राजनैतिक, आर्थिक विचारों की वर्तमान समय में उपादेयता का समग्र रूप से अध्ययन किया जा सकता है।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

शिक्षाविकिपीडिया<https://hi.wikipedia.org/wiki/%E0%A4%AD%E0%A4%BE%E0%A4%B0%E0%A4%A4>

प्राचीन भारतीय शिक्षा
<https://hi.wikipedia.org/wiki/%E0%A4%AA%E0%A5%8D%E0%A4%B0%E0%A4%BE%E0%A4%9A%E0%A5%80%E0%A4%A8_%E0%A4%AD%E0%A4%BE%E0%A4%B0%E0%A4%A4%E0%A5%80%E0%A4%AF_%E0%A4%B6%E0%A4%BF%E0%A4%95%E0%A5%8D%E0%A4%B7%E0%A4%BE>

भारतीय शिक्षा का
इतिहास<https://hi.wikipedia.org/wiki/%E0%A4%AD%E0%A4%BE%E0%A4%B0%E0%A4%A4%E0%A5%80%E0%A4%AF_%E0%A4%B6%E0%A4%BF%E0%A4%95%E0%A5%8D%E0%A4%B7%E0%A4%BE_%E0%A4%95%E0%A4%BE_%E0%A4%87%E0%A4%A4%E0%A4%BF%E0%A4%B9%E0%A4%BE%E0%A4%B8>

मैकाले के प्रभाव और इस-देश-की-शिक्षा-पद्धति
<https://hiin.facebook.com/notes/%E0%A4%B9%E0%A4%BF%E0%A4%A8%E0%A5%8D%E0%A4%A6%E0%A5%81%E0%A4%A4%E0%A5%8D%E0%A4%B5/%E0%A4%AE%E0%A5%88%E0%A4%95%E0%A4%BE%E0%A4%B2%E0%A5%87-%E0%A4%95%E0%A5%87-%E0%A4%AA%E0%A5%8D%E0%A4%B0%E0%A4%AD%E0%A4%BE%E0%A4%B5-%E0%A4%94%E0%A4%B0-%E0%A4%87%E0%A4%B8-%E0%A4%A6%E0%A5%87%E0%A4%B6-%E0%A4%95%E0%A5%80-%E0%A4%B6%E0%A4%BF%E0%A4%95%E0%A5%8D%E0%A4%B7%E0%A4%BE-%E0%A4%AA%E0%A4%A6%E0%A5%8D%E0%A4%A7%E0%A4%A4%E0%A4%BF/365605110140945/>

भारत में शिक्षा - समस्याएं और
<http://asolutiontotheindianporblem.blogspot.com/2017/11/blog-post_13.html>

हण्टर_आयोग<https://hi.wikipedia.org/wiki/%E0%A4%B9%E0%A4%A3%E0%A5%8D%E0%A4%9F%E0%A4%B0_%E0%A4%86%E0%A4%AF%E0%A5%8B%E0%A4%97**>**

हन्टर_शिक्षा_आयोग

<https://bharatdiscovery.org/india/%E0%A4%B9%E0%A4%A8%E0%A5%
8D%E0%A4%9F%E0%A4%B0_%E0%A4%B6%E0%A4%BF%E0%A4%95%E0
%A5%8D%E0%A4%B7%E0%A4%BE_%E0%A4%86%E0%A4%AF%E0%A5%
8B%E0%A4%97>

लॉर्ड_कर्जन<https://hi.wikipedia.org/wiki/%E0%A4%B2%E0%A5%89%E0%A4%B0%E0%A5
%8D%E0%A4%A1_%E0%A4%95%E0%A4%B0%E0%A5%8D%E0%A4%9C%E0%A4%A
8>

<https://www.gkexams.com/ask/71945-Lord-Karjan-Ki-Shiksha-Neeti-1904>

सैडलर_आयोग<https://bharatdiscovery.org/india/%E0%A4%B8%E0%A5%88%E0%A4%A1%E
0%A4%B2%E0%A4%B0_%E0%A4%86%E0%A4%AF%E0%A5%8B%E0%A4%97#gsc.tab
=0>

हर्टांग_समिति

<https://hi.wikipedia.org/wiki/%E0%A4%B9%E0%A4%B0%E0%A5%8D%E
0%A4%9F%E0%A4%BE%E0%A4%82%E0%A4%97_%E0%A4%B8%E0%A4
%AE%E0%A4%BF%E0%A4%A4%E0%A4%BF>

सारजेंट_शिक्षा_योजना

<https://hi.wikipedia.org/w/index.php?title=%E0%A4%B8%E0%A4%BE%
E0%A4%B0%E0%A4%9C%E0%A5%87%E0%A4%82%E0%A4%9F_%E0%A4
%B6%E0%A4%BF%E0%A4%95%E0%A5%8D%E0%A4%B7%E0%A4%BE_%
E0%A4%AF%E0%A5%8B%E0%A4%9C%E0%A4%A8%E0%A4%BE&action=
edit§ion=1>

राधाकृष्ण_आयोग

<https://hi.wikipedia.org/wiki/%E0%A4%B0%E0%A4%BE%E0%A4%A7%E0%A4%BE%E0%
A4%95%E0%A5%83%E0%A4%B7%E0%A5%8D%E0%A4%A3_%E0%A4%86%E0%A4%AF
%E0%A5%8B%E0%A4%97>

माध्यमिक_शिक्षा_आयोग
<https://hi.wikipedia.org/wiki/%E0%A4%AE%E0%A4%BE%E0%A4%A7%E0%A5%8D%E
0%A4%AF%E0%A4%AE%E0%A4%BF%E0%A4%95_%E0%A4%B6%E0%A4%BF%E0%
A4%95%E0%A5%8D%E0%A4%B7%E0%A4%BE_%E0%A4%86%E0%A4%AF%E0%A5
%8B%E0%A4%97>

कोठारी_आयोग<https://hi.wikipedia.org/wiki/%E0%A4%95%E0%A5%8B%E0%A4%A0%E0%A4%BE%E0%A4%B0%E0%A5%80_%E0%A4%86%E0%A4%AF%E0%A5%8B%E0%A4%97>

प्रेक्षणविकिपीडिया<https://hi.wikipedia.org/wiki/%E0%A4%AA%E0%A5%8D%E0%A4%B0%E0%A5%87%E0%A4%95%E0%A5%8D%E0%A4%B7%E0%A4%A3>

नानाजी_देशमुख

<https://hi.wikipedia.org/wiki/%E0%A4%A8%E0%A4%BE%E0%A4%A8%E0%A4%BE%E0%A4%9C%E0%A5%80_%E0%A4%A6%E0%A5%87%E0%A4%B6%E0%A4%AE%E0%A5%81%E0%A4%96>

नानाजी_देशमुख<https://hi.wikipedia.org/wiki/%E0%A4%A8%E0%A4%BE%E0%A4%A8%E0%A4%BE%E0%A4%9C%E0%A5%80_%E0%A4%A6%E0%A5%87%E0%A4%B6%E0%A4%AE%E0%A5%81%E0%A4%96>

दीनदयाल शोध संस्थान – विकिपीडिया
<https://hi.wikipedia.org/wiki/%E0%A4%A6%E0%A5%80%E0%A4%A8%E0%A4%A6%E0%A4%AF%E0%A4%BE%E0%A4%B2_%E0%A4%B6%E0%A5%8B%E0%A4%A7_%E0%A4%B8%E0%A4%82%E0%A4%B8%E0%A5%8D%E0%A4%A5%E0%A4%BE%E0%A4%A8 >

अवस्थी श्रीकान्त (2013)। पं० दीनदयाल उपाध्याय के शैक्षिक विचारों का विवेचनात्मक अध्ययन। पी एच० डी०- शिक्षा शास्त्र, कुमाऊँ विश्वविद्यालय सोबन सिंह जीना परिसर अल्मोड़ा, उत्तराखंड
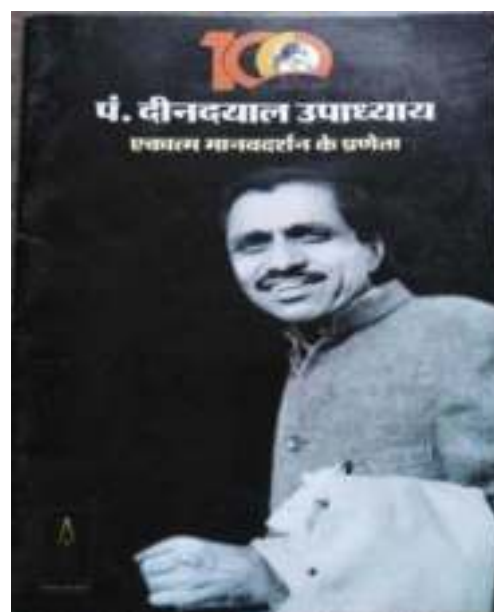
दीन दयाल शोध संस्थान का शैक्षिक योगदान

हमारी राष्ट्रीयता का आधार भारत माता है

सिर्फ भारत नही, इसमें सिर्फ माता शब्द

हटा लीजिए तो भारत मात्र

एक जमीन का टुकड़ा मात्र बन कर रह जायेगा

ISBN 978-93-5659-160-8

9 789356 591608 >